प्रकाशक—

बनारसीप्रसाद खत्री

* श्रीहरिः *

प्रेमकान्ता सन्तति।

(एक मनोरञ्जक ऐय्यारी उपन्यास)

पाँचवाँ भाग।

लेखक—

आशुकवि शम्भुप्रसाद उपाध्याय।

" प्रेमका प्याला पिलाकर, प्रेमका अब दम भरो।
प्रेममें दिलको मिलाकर, प्रेमसे सब कुछ करो॥"

यह

उपन्यास दर्पण के अध्यक्ष

बाबू बनारसी प्रसाद वर्म्मा द्वारा—

प्रकाशित।

प्र० बा० १०००) १९८३ मू० ॥=)

प्रकाशक—
बनारसीप्रसाद वर्मा,
बनारस सिटी।

मुद्रक—
महेशप्रसाद,
सत्यनाम प्रेस, काशी।

* श्री हरिः *

श्री ईष्ट देवता चरण कमलेभ्यो नमः ।

प्रेमकान्ता-सन्तति

पाँचवाँ भाग ।

पहिला बयान ;

"बोलना बुलबुल समझकर-सामने सैय्याद है ।
तुम कहीं चूके यहाँ, फिरतो रखा बर्बाद है ॥"
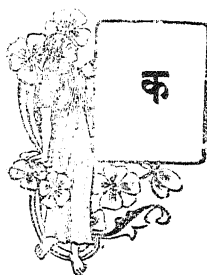
कमरे की तमाम रोशनी बुझतेही कुमार महेन्द्रसिंह पलंग पर से उठ खड़े हुए। उनको इस बात से ताज्जुब तो कुछ हुआ, मगर घबड़ाए नहीं । वे उठकर आगे बढ़ाही चाहते थे, इतने में धीरे से किसी ने आकर उनका हाथ पकड़ा अँधेरे में सूरत तो दिखलाई नहीं पड़ती थी, मगर कोमल हाथ के स्पर्श से उन्हे मालूम हुआ, वह कोई औरत है । उन्होने अपना हाथ इस तरह पकड़तेही कहा,—"क्या तुम

खञ्जनी हो !" इसके जवाब में किसी ने बहुतही धीरे कहा,—"जीहां, प्राणनाथ ! मगर हम दोनों इस समय इस कमरे में बड़ा विपद् का सामना कर रहे हैं। आप चुप-चाप मेरे साथ चले आइए। मैं आपको एक दूसरीही जगह ले चलती हूँ।" कुमार कुछ बोले नहीं। वह हाथ थामे हुई आगे बढ़ी। वे भी चुप-चाप उसके पीछे२ चलने लगे। अँधेरे में कुछ दिखलाई तो नही पड़ता था, मगर अन्दाज से कुमार ने मालूम कर लिया, वह जिस तरफ जारहे थे, वह दरवाजा नहीं था। कुछ देर धीरे धीरे पैर दबाकर चलने के बाद वह औरत खड़ी हुई, साथही कुछ खटके के साथ किसी चीज के खड़-खड़ाते हुए नीचे उतरने की आवाज आई। इसके बाद वह औरत आगे बढ़ी। कुमार भी उसके पीछे-पीछे अँधेरेही में जिस तरह वह चलती थी, चलने लगे। आध घण्टे के करीब इसीतरह चुप-चाप चलने के बाद फिर वह औरत रुकी, उसके रुकतेही फिर वैसाही खटका हुवा, साथही बिजली की रोशनी से जगमगाती हुई एक छोटी सी कोठरी में दोनों पहुंचे। उजाले में आतेही कुमार ने सबसे पहले उस औरत की सूरत देखी,—उसको देखतेही-उनके दिल में जो कुछ शक पैदा हुवा था—वह दूर होगया। कोठरी छोटी तो था, मगर कीमती सामानों से सजी हुई थी। उन दोनों के अन्दर आतेही दरवाजा बन्द होगया था,—इसलिए खञ्जनी ने हवा के लिए पंखा खोल दिया। उस कोठरी में और कोई नहीं था। खञ्जनी ने कुमार को एक कुर्सी पर बैठाकर कहा,—"आपको गर्मी मालूम पड़ रही हो तो शर्बत पिलाऊँ ?

कुमार—(चौंक कर) ऐं ! तुम्हारी आवाज एका-एक कैसे बदल गई ?"

खञ्जनी—(हँसकर) जैसे मैं एक दूसरीही औरत होती हुई खञ्जनी की सूरत में आगई।

कुमार—(ताज्जुब से उसकी सूरत देखते हुए) तो क्या तुम खञ्जनी नहीं हो?

खञ्जनी—जीनहीं, क्या आप मुझे खञ्जनी समझे हुए थे?

कुमार—क्यों नहीं, तुम्हारी सूरत भी तो खञ्जनीही बता रही है।

खञ्जनी—आप ऐयारों के साथ रहकर भी इनसब बातों को अभीतक जानते नहीं? सूरत का बदल डालना क्या इस तिलस्म के भीतर कुछ कठिनाई है?

कुमार—तो तुम कौनहो?

खञ्जनी—मैं कौन हूँ. मैं खञ्जनी नहीं हूँ, एक औरही औरत हूं।

कुमार—फिर क्यों तुमने मुझे धोका दिया?

खञ्जनी-मैंने धोका दिया! आप सरा-सर भूल करते हैं। धोका तो आपने दिया।

कुमार—(कुछ बिगड़कर) यह फजूल की तोहमत तुम मेरे ऊपर क्यों लगाती हो?मुझे ऐसी दिल्लगी ज़रा भी पसन्द नहीं है

खञ्जनी- हैं हैं, आप बिगड़ते क्यों हैं? इस तरह से बिगड़ कर कहीं किसी का काम बना है?

कुमार—मैं बिगड़ता नहीं, तुम्हारी बातेंही बिगड़ने की है।ख़ैर सच-सच बताओ, तुम कौन हो? नहीं तो मैं इसी दम यहां से चला जाऊँगा।

खञ्जनी—चला जाऊँगा! यह असम्भव बात है। आप मेरे कहे बिना कैसे चले जाइएगा?

कुमार—(उठकर) देखती रहना, मैं जिस रास्ते से चला आया हूं उसी रास्ते से चला जाऊं गा ।

खञ्जनी—अच्छी बात है, चले जाइए ? मैं आपको रोकूंगी नहीं । मगर याद रखना, यह तिलस्म है । यहां क़ायदे के खिलाफ ज़बर्दस्ती से एक तिन्का भी उठाया जा नहीं सकता ।

कुमार—(सोचकर) ठीक कहती हो । मगर—ख़ैर मेहरबानी के साथ अपना परिचय देकर, मुझे जहां से लाई हो, वहाँ पहुँचा दो ?

खञ्जनी—अपना परिचय तो मैं दूँगी ही, दिए बिना किसी तरह काम नहीं चल सकता; मगर आपको जिस जगह से ले आई हूं उस जगह तो नहीं पहुंचा सकती ?

कुमार—क्यों नहीं पहुंचा सकती ? अगर तुम पहुंचा नहीं सकती हो तो,—दरवाज़ा खोलदो, मैं स्वयं चला जाऊंगा ।

खञ्जनी—फिर आप उसी अनहोने रास्ते पर चले । भला सोचिए तो—यहाँ का दरवाज़ा खोलतेहो वहां का दरवाज़ा क्या आप के पहुँचतेही, मुंगेर के सिपाहियों की तरह आप से आप हट जायगा ?

कुमार—(बिगड़कर) तुमने क्या मुझे मजाक का पुतला समझ रक्खा है ?

खञ्जनी—नहीं, मजाक का पुतला तो नहीं मगर पुतले का खेल तो ज़रूर समझ रक्खा है । अगर ऐसा न होता तो आप इस तिलस्म के अन्दर,—इधर से उधर, इस तरह कभी न टकराते फिरते, ख़ैर—जाने दीजिए, आप जिस तरह कुरसी पर बैठे हुए थे उसी तरह बिगड़े बिना चुप-चाप कुरसी पर बैठ जाइए, मैं आपको रहते बैठते जहाँ कहिएगा वहाँ पहुँचा दूँगी ।

कुमार—खैर तुम कौन हो, यहतो बतावो ?

खञ्जनी—आप कुरसी पर बैठ जाइए तो बताऊँ।

कुमार-क्या खड़े-खड़े तुम्हारी आवाज मेरे कानों तक नहीं पहुँच सकती है ?

खञ्जनी—(हँसकर) यह देखिए, आपने भी मेरे साथ मज़ाक करना शुरू कर दिया ! अच्छी बात है,—कीजिए, मगर मैं आपकी तरह थोड़ेही रञ्ज हूँगी।

कुमार—मैंने तुम्हारे साथ कौन सा मज़ाक किया है, जिससे तुम रञ्ज होगी ?

खञ्जनी—यह भी आप इतमीनान के साथ कुर्सी पर बैठ-जाइएतो, साफ़-साफ़ खोलकर बताऊँ।

कुमार—इस तिलस्म का अजबही मामला है।

खञ्जनी—जीहां, अगर अजब मामला न होता तो तिलस्मही काहेको कहलाता।

कुमार—तुम बड़ी बातूनी मालूम पड़ती हो ?

खञ्जनी-जी नहीं,—मैं बातूनी की छोटी बहन और बतौले की सालो हूँ। इसी से तो मैं किसी को पसन्द नहीं करती हूं, इसलिए अबतक खाली हूँ।

कुमार—(हँसकर) वाह ! तुमतो तुक मिलाना भी जानती हो, मालूम पड़ता है तुम शायरी भी करती हो।

खज्जनी,—"शायरी ! राम ! राम ! शायरीका नाम भी न लीजिए ? शायरी सत्तुरी ने तो मुझे किसी काम की बनाके नहीं छोड़ी है। मैं इनदिनों उसके पास तो क्या उसके नाम का हवा तकके पास नहीं जाती हूँ।"

कुमार,—खैर,-इन सब बे मतलब की बातों से क्या प्रयोजन, तुम अपने चेहरे को धोड़ालो और अपना परिचय दो ?

इसके जवाब में वह कुछ कहाही चाहती थी, इतने में उसके पीठकी तरफ का बन्द दरवाज़ा खुला और उसमें से नारङ्गी आती हुई दिखलाइ पड़ी। उसे देखते ही कुमार ने प्रसन्न होकर उसकी तरफ बढ़ने हुए कहा,—"अहा! तुम बहुतही अच्छे मौक़े पर आपहुँची। मैं तुम्हे देखकर कितना प्रसन्न हुवा हूं नारङ्गी! वह अपनी ज़बान से नहीं कह सकता। चलो,-तुम मुझे इस मकान से निकाल कर अपने मकान में ले चलो?"

नारङ्गी—(दो कदम पीछे हटती हुई) आप कौन हैं हज़रत! बिनाजान-पहिचान के मेरी तरफ़ क्यों बढ़ रहे हैं? क्या आपने सभ्यता कभी सीखी ही नहीं है? (खञ्जनी की तरफ़ देखकर) क्यों बहन! तुम अपने कमरे में कैसे भले आदमी को लाकर रक्खा करती हो?"

खञ्जनी—मैं लाया तो बहुत ही भले आदमी को करती हूं और किया भी ऐसेही था, मगर तुम्हारी खूबसूरती ने बेचारे की भलमनसीयत को रहने नहीं दी। तुम्हारे साथ जो कुछ भी इन्होंने उतावलापन किया उसके लिए यह दोषी नहीं हैं, तुम्ही दोषी हो।

नारंगी—यह बेक़सूर हैं और मैं कसूरवार हूं! वाह बहन! यह तुमने अच्छा कहा। मालूम होता है, तुम इनकी तरफ़दारी बहुत किया करती हो और इसीसे ये सोख़ होकर ऐसी बेअदवी किया करते हैं। भला यह तो बतावो, ये महात्मा हैं कौन?"

खञ्जनी—तुम्हे क्या खुद उनसे पूछते शरम मालूम होती है? अगर शरम मालूम होती होतो मैं पूछकर बताऊं?"

कुमार—(नारंगी से) क्या तुम मुझे इतनी जल्दी भूल

गई हो! परसों ही की तो बात है, तुम से जुदा होकर मैं बड़ी मुसीबत में फंसाथा, मुझे बचनेकी ज़रा भी उम्मीद नहींथी।"

नारंगी—(ताज्जुब की सूरत बनाकर) वाह साहब! आप क्या कर रहे हैं,–कुछ दिमाग़तो आपका घूम नहीं गया है? आप मेरे पास कब आए थे और कब जुदा होकर मुसीबतमें फंसे थे? किसी को नाहकही बदनाम करना इन्सानीयत नहीं है।"

कुमार—तो क्या तुम नारंगी नहीं हो?"

नारंगी—मैं नारंगी क्यों होने लगी। मैं नारंगी तो क्या नारंगी की बूतक को भी नहीं जानती।"

कुमार—तो तुम कौन हो. तुम्हारी सूरत तो हूबहू उसी की तरह है। क्या तुमने भी इन्हीकी तरह अपनी सूरत तो नहीं रंगी है?"

नारंगी—अब तो मुझे मालूम हुवा, जरूर आपके दिमाग़ में आधे से ज्यादा गर्मी घुसी हुई है।

कुमार—(बिगड़कर) देखो, ज़बान संभालकर बातें करो! बहुत हुवा, अब मैं अपने को बर्दाश्त के भीतर रख नहीं सकूंगा।

खञ्जनी—आप इतनेही में आपे से बाहर होगए! मालूम होता है,–आपको अपने संभालने की ताक़त ही नहीं हैं।

नारंगी—अजी तुम क्या पूछरही हो? अगर इनमें अपने को संभालनेको ताक़त होती तो मेरे ऊपर पागल की तरह क्यों टूट पड़ते? देखो देखो—इतना कहतेही इनकी सूरत कैसे बदल गई। मालूम पड़ता है,—ये मुझे कच्चे ही खाजायंगे।

खञनी—रहने दो बहन! जिसको दिल्लगी ज़रा भी

पसन्द नहीं है, जो दिल्लगी के नाम से चिढ़ बैठता है, उससे दिल्लगी करने में कुछ भी मज़ा नहीं आता।

नारंगी—तो मैं दिल्लगी कब करती हूं। क्या तुमने सच्ची सच्ची बातों को भी दिल्लगी ही मान लिया है?

खञ्जनी—मैंने तो नहीं माना है मगर यह तो मानते हैं।

नारंगी—ये मानते हैं तो मानतेही रहें, मुझे इस बात की जराभी परवाह नहीं है।

खञ्जनी—नहीं नहीं बहन! तुम्हे इनकी इस समय परवाह करनी ही होगी।

नारंगी—क्यों मैं इनकी परवाह करूं, मुझे क्या पड़ी हुई है?

खञ्जनी—यह इस समय मेरे मेहमान हैं। मैं इनको अपनी इस छोटी सी कोठरी में ले आई हूँ। तुम भी इस समय मेरेही घरमें हो, ऐसी हालत में तुम्हे इनको मानताही उचित है।

नारंगी—ख़ैर—तुम्हारे कहने से मैं इनको मानती हूं, मगर ये खड़े—खड़े क्यों दोनाको घूर रहे हैं। (कुमार से) आपने क्या अपने पैरों को लोहे का बना रक्खा है? आप कुरसी पर क्यों नहीं बैठ जाते!

कुमार—मैं तब तक हर्गिज न बैठूंगा; जब तक तुमलोग सच्ची—सच्ची बातें कहकर अपना परिचय दो न लोगी।

नारंगी—तो क्या आपही अकेले ऐसा कहकर अपनी टेक दिखाते हैं,—हमलोग नहीं कह सकते हैं कि, बिना कुरसी पर बैठे सच्चा २ परिचय नहीं दे सकती।

कुमार—हां, कह क्यों नहीं सकती हो और कह भी रही हो मगर मुझे ज्यादे देर तक इस भूल-भूलैय्ये में मत डाल रक्खो!

नारंगी—तो जनाब ! आप सीधी तरह कुरसी पर बैठ जाइए। हमलोग आपको वह हाल सुनावेंगी, जिससे तबीअत खुश हो जायगी।

कुमार—अच्छी बात है (कुरसी पर बैठकर) लो बताओ, तुम दोनों कौन हो और किसलिए मुझे यहांतक इन्होंने खञ्जनी की सूरत बनकर ले आनेकी तकलीफ़ उठाई ?

नारंगी—यह पिछली बातें तो इन्हीं से पूछिए, यही बतलावेंगी. मगर हां हमलोग कौन हैं, यह मैं बतलाती हूं सुनिए, ये मेरे मामाकी लड़की हैं, मैं इनके मामाकी लड़की हूं।

कुमार—यह तो ठीक है, तुम दोनो आपस में बहन-बहन हो। मगर तुम दोनोका क्या नाम है, यहां किस तरह रहती हो, यह तो बताओ ?

नारंगी—बहुत अच्छा, मेहमानका कहना न मानना भी एक महापाप है। सुनिए, हमदोनो बहन २ हैं, यह तो आप जानहीगए। अब रहगई बात नाम जाननेकी और हमलोग किस तरह रहती हैं, वह जाननेकी। अच्छी बात है। आप मुझे तो रंगिनी के नाम से जानिए और इन्हे तरंगिनी के नाम से जानिए। मैं मझली महारानी मायादेवी की सखी हूं ये छोटी महारानी कुमुदिनी की सखी है।

कुमार—यह तो मैंने पहले ही से अन्दाज़ कर रक्खा था। मगर यह तो बताओ,-तुम नारंगी को और खञ्जनीको जानती हो या नहीं ?

रंगिनी—मैं ही क्यों मेरी बहन भी मज़े में जानती हैं। जिससे रोज़का सामना हो, जिससे रोज़ की बोलाचाली हो, उससे भी न जानेंगे !

कुमार—अगर ऐसी बात थी तो तुमने नारंगी के बारेमें पहले क्या कहा था ?

रंगिनी—उस समय दिल्लगी ही करने की सूझी थी इस लिए वैसा कह दिया था। मगर, नहीं, मैं सब से ज्यादा किसी को जानती हू तो, नारंगी ही को जानती हूं।

कुमार—तुमने नारंगा की सूरत क्यों बनाई? वह इस समय कहां है ?

रंगिनी—इस समय तो वह मौज के दरया में गोता लगारही होगी। मगर हां, खैर—उसकी सूरत मैं क्यों बन आइ, यह एक रहस्यमय बात है, परन्तु मैं अब आप से कुछ भी छिपाऊंगी नहीं, साफ-साफ खोलकर कहूंगी। सुनिए- उसके एक प्रेमी को छकाना था इसीलिए उसकी सूरत बनकर आई थी।

कुमार—क्या उसके कइ एक प्रेमी भी हैं ?

रंगिनी—(हँसकर) क्या आप समझते थे, मैं ही एक उसका प्रेमी हूं। अजी साहब! उसके तो इतने प्रेमी हैं, जितने किसी हसीन कमसीन तवायफ के भी नहीं होंगे।

कुमार—(रञ्ज होकर) यह तुम उसका शानके ख़िलाफ़ बात कर रही हो। अगर वह अपने मुंहसे ऐसी वाहियात बातें निकाले,निकालकर कबूल करे तो भी मैं यकीन नहीं कर सकता।

तरंगिनी—(हंसकर) मालूम होता है, ये उनके स्वभाव से बिलकुलही वाकिफ़ नहीं हैं, अगर वाकिफ होते तो ऐसा हर्गिज न कहते।

रंगिनी—तुम्हारा किधर ख्याल है बहन! ये उसकी मुहब्बत के नशेमें चूर हैं। इसलिए हमलोगों की बातों का- लाख मी कहें विश्वास नहीं करेंगे।

तरंगिनी—ठीक कहती हो बहन ! अब उसका ज़िक्रही छोड़दो । हां साहब ! मैं आपको खञ्जनी के कमरे से खञ्जनी की सूरत बनकर क्यों ले आई, यह बताती हूं सुनिए—आपको भोली - भाली दिलको लुभाने वाली सूरत देखकर मुझे आपके ऊपर तरस आया, इसलिए उस ख़तरे की जगह से आपको निकालकर हिफ़ाजत की जगह पर ले आई।

कुमार—अगर ऐसी ही बात थी तो उसकी सूरत बनने की क्या ज़रूरत थी ?

तरङ्गिनी—उसने बख्तियाके हाथों से आपकी जान बचाईथी, इसलिए आप मेरी बातोंको कभी न सुनते। इधर मैंने जिस तरह से हो आपको निकाल अपने यहां लाकर आपको धोके से बचाने का प्रण किया था इसलिए उसकी सूरत बनकर कुछ घण्टेके लिए आपको भी धोका देनाही उचित समझकर मैंने वैसा किया।

कुमार—यह तो तुमने बहुतही बुरा किया, मगर ख़ैर,—तुम दोनों अपनी असली सूरत को तो दिखादो ?

रंगिनी-इसके लिए आपको मजूरी देनी पड़ेगी।

कुमार—जो चाहो, मैं देनेके लिए तैय्यार हूं।

रंगिनी—देखना बहन ! ये अपनी बातों से फिर न जायँ।

तरंगिनी—नहीं बहन ! इनके ऊपर शक न करो, ये भारतवर्ष के प्रतापी महाराज नरेन्द्रसिंह के लड़के हैं । जहां तक मैं समझती हूं ये ज़बान के कच्चे हर्गिज न होंगे।

रंगिनी—तो ठीक है, आवो—(टेबुल पर से एक अर्क की शीशी उठाकर) मैं इससे तुम्हारा मुंह धो देती हूं, तुम मेरा मुंह धो दो। इतना कह उस शीशी को उलझ कर उन

दोनों ने आपस में एक दूसरी को धोदिया । धोतेही वे दोनों एक औरही शकल सूरत की-उन दोनों से भी हसीन कमसीन-निकल आईं । कुमारकी आँखें उन दोनों के ऊपर पारी-पारी से जाकर जमने लगी । यह देख रंगिनी ने कहा—कहिए जनाब ! आप इस तरह से टुकुर-टुकुर हमलोगों की तरफ क्यों देखते हैं ?

कुमार—माफ़ करना, मैंने किसी बुरी नियत से तुमलोगों को इस तरह नहीं देखा है । केवल-पहचान रखने की ग़रज से देखा है। वास्तव में तुम दोनों,—उन दोनों से बहुतही हसीन हैं !

रंगिनी—इसका क्या माने,—क्या आप उन दोनों को इतनी जल्दी भूलकर हम दोनों के ऊपर आशक होगए ?

कुमार-नहीं नहीं, यह तुम क्या कह रही हो ? न मैं उन दोनों के ऊपर आशक था......................

रंगिनी—(बात काटकर) न तुम्हीं लोगों के ऊपर आशक हूं । यही न—अच्छी बात है । हमलोग भी यही चाहती ही हैं । कौन बला अपने सरपर उठावे । कहीं दोनो महारानियों को मालूम हो जाय तो बदन की बोटी-बोटी अलग हो जाय ।

कुमार—(सामने की तरफ़ देखते हुए) जबसे मैं तिलस्म के अन्दर आया हूँ, तबसे यही हाल देखता हूँ । न जाने मेरी तकदीर में क्या होना बदा है ।

रंगिनी—तिलस्म का तोड़ना बदा है और दोनो महारानियों को अपनी मुहब्बत में तड़पाना बदा है ।

कुमार—(उसकी बाते अनसुनी कर) न जाने परमात्मा कब मुझे इस तिलस्म के गोरखधन्धे से छुटकारा दिलावेगा ।

तरङ्गिनी—आप जब चाहे तब छुटकारा पा सकते हैं ।

कुमार—अफ़सोस ! मेरा वक़् इसी तरह के झमेलों में फँसकर नाहक हो चला जा रहा है ।

रंगिनी—आप क्या चाहते हैं महात्मा! यह तो बताइए?

कुमार—मैं सिवाय छुटकारे के और कुछ भी नहीं चाहता।

रंगिनी—यह तो इस समय असम्भव है,-मगर घबड़ाइए मत, दो एक रोज़ सब्र के साथ आप इसी मकान में-एक सुरक्षित स्थानपर रहिए, मैं कोशिश करके आपको तिलस्मके बाहर कर दूँगी।

तरङ्गिनी—मगर आप तिलस्म तोड़े बिनाही निकल जाइएगा?

कुमार—नहीं बाबा, मुझे तिलस्म तोड़ना नहीं है, परमात्मा ने मुझे सब कुछ दे रक्खा है। अगर मैं उसीपर सन्तोष करके रहूं तो भी कई पुश्तके लिए काफ़ी है।

रङ्गिनी—आप गलती करते हैं,-राजाओंको भी कहीं सन्तोष करके रहना होता है? इसके जवाब में कुमार कुछ कहा-ही चाहते थे, इतने में जिस दरवाजे से रंगिनी आई थी, उसके बाहर से कुछ धम्माके की आवाज़ आई, जिसको सुनतेही तेजी के साथ रङ्गिनी बाहर चली गई। उसको इस तरह जाते देख, कुमार भी उठखड़े हुए। तरंगिनी ने रोशनी गुल करने के लिए हाथ बढ़ायाही था, इतनेमें बाहरसे आवाज़ आई देखो तो बहन! ऐसी भी दिल्लगी कहीं होती है? यह सुनते ही रोशनी को बुझाए बिना तरंगिनी भी बाहर चली गई। कुमार टक-टकी बाँधे दरवाजे की तरफ़ देखने लगे। उन्हे उन दोनो के रंग-ढंगसे कुछ शकभी पैदा हुवा।

❋ दूसरा बयान ❋

" खाया नहीं है धोका, खाकरहि आज देखो ।
फिरतो बहुत संभलकर तुम काम-काज देखो ॥ "

अपने पीछे से सवारों के आनेकी आवाज़ सुनते ही विक्रमसिंह घोड़े पर से कूद पड़े, और बड़ी फूर्त्ति के साथ अच्युतानन्द को बेहोशकर, उसकी सूरत आप बन, अपनी सी सूरत उसकी बना,-उसका कपड़ा आप पहिन, अपना कपड़ा उसको पहना;-उसकी ज़बान पर ज़बान ऐंठने का अर्क मल,—जसवन्तसिंहकी तरफ़ देखकर धीरेसे कहने लगे;—"जो जो मैं कहूं, उसको लाचारी का ढंग दिखाकर मानते जाना । उनके मुंहसे इतनी बातें निकलने भी नहीं पाई थी, इतने में पचास सवारों ने आकर रथको घेर लिया । विक्रमसिंह तनकर खडे हुए और जसवन्तसिंह की तरफ़ देखकर कहने लगे,-"देखा, तुम्हारे साथीका क्या हाल हुवा, अब बतावो, तुम्हे लड़ना-भिड़ना है या सीधी तरह हमारा कहा मानना है ?

जसवन्त—अब मैं ऐसी हालत में क्या लड़ सकता हूं । अगर अकेले होते तो मेरे साथी को नीचा दिखाने का मजा चखाए विना नहीं रहता । हाँ, अब भी अगर तुम अकेले आवो तो मैं लड़नेके लिए तैय्यार हूं ।

बिक्रम – अबे कलके लौंडे ! तू क्या मुझसे लड़कर पार पा सकेगा। देखा नहीं, एक ही झटके में तेरे साथी की दाँती बंध गई ! अब तू लड़ेगा तो – मौतके सिवाय तेरा चारा भी नहीं रहेगा। (एक सवार की तरफ़ देखकर) इस बेहोश को तुम उठाकर एक खाली घोडे़ पर कसदो। इतना सुनतेही उस सवार ने घोड़ेपर से उतरकर, अच्युतानन्द को विक्रमसिंह के घोड़े पर बड़ी बेरहमीके साथ कसदिया। इसके बाद उसकी बाग़डोर थामे हुए अपने घोडे़ पर सवार हुवा। तबतक बिक्रमसिंह भी अच्युतानन्द के घोडे़ पर सवार होचुके थे। उनके सवार होतेही उन सवारोंमें से एक अफ़सराने ढंग के आदमीने अपने घोड़ेको कुछ आगे बढाकर अदब के साथ कहा,—"अब इस लौंडेके लिए क्या हुक्म होता है ?

बिक्रम—एक तुच्छ आदमी के खून से हाथ रंगना हम लोग ऐसे आदमियों को शोभा नहीं देती है। इसको इस सवार के घेरेमें रख कर ले चलो। रथके साथ-साथ मैं चलता हूं। उसके अगल बगल में बीस सवार को रहने के लिए कहो। अब मेरा विचार जहांतक जल्द होसके नीलनगर पहुँच कर एक आदमी को होशियार कर देनेका होरहा है। (माधवी से) अबे कोचवान ! गाडी को तेजी के साथ हांक!! माधवी ने चुप-चाप घोड़ेकी रास को ढीली करदी। रथ तेजी के साथ घड़-घड़ाता हुवा आगे की तरफ बढ़ने लगा। नंगी तरवार खींचे बीस सवार रथके अगल बगल में चलने लगे। जसवन्तसिंह को घेरे में डाल बांकी के सभी सवार बढ़ने लगे। बिक्रमसिंह भी रथके बिलकूल ही पास आकर चलने लगे। करीब घण्टे भ के इसी तरह चलने के बाद ये लोग एक बहुत बड़े छायादार पेड़के पास पहुँचे। उस पेड़के नीचे

एक खूबसूरत कूंआ और एक छोटासा मन्दिर भी बना हुवा था । उसको देखकर बिक्रमसिंह ने रथको रोकने के लिए कह, गाडीके भीतर झांक कर जरा जोर से कहा,—"अब तो तुम लोग, जिस तरह से भाग खड़ी हुई थी उसी तरह से मेरे कब्जे में आगई हो, मैं इस समय जो चाहे तुमलोगों से कर सकता हूं, मगर नहीं,—मैं औरतों के ऊपर ज्यादती नहीं करता. अगर तुमलोगों को जलपान कर, कुछ देर सुस्तानेकी इच्छा होतो, यह जगह बहुत ही अच्छी है, गाड़ी से उतर पड़ो। परदेशमें परदेका ख्याल नहीं रहता. तिसपर तुमलोग असली सूरत में हो भी नहीं। कहो, क्या कहती हो? यह सुनकर जान्हवी ने कहा,—"इस समय और बातोंका तो मैं जवाब नही देती, मगर हां, हमलोगोंका भी इरादा कुछ देर सुस्तानेका है। तुम गाडी के ऊपर बँधी हुई दरी बिछा दो. हमलोग उतर पड़ती हैं। उसकी बातें सुन विक्रमसिंह ने अपने पासहीके दो सवारों को दरी उतारकर मन्दिर के पास-ही बिछाने का हुक्म दिया। उन दोनों ने उसी दम उस जगह लेजाकर बिछा दिया । पांचों औरतें गाडी का दर-वाजा खोलकर बाहर निकल आईं। माधवी ने घोडे को खोलकर सुस्तानेके लिये छोड़ दिया। वे सब औरतें दरीपर आकर बैठ गईं। जसवन्तसिंह को सवारों ने कुछ दूर ले-जाकर बैठाया। बिक्रमसिंह औरतों के पासही आकर बैठ गए। एक सवारने कूंए से पानी निकाल कर उन सबों के सामने रख दिया। सबोंने हाथ मुंह धोकर जल पिया। थोड़ी देर तक सुस्ताने के बाद बिक्रमसिंहने जान्हवी की तरफ देख-कर धीरे से कहा,—"यह सब हरामजादेतो काठके उल्लूकी तरह हमलोगों के कब्जे में आगए हैं, अब बताइए, क्या करना

होगा, कौनसी चाल चलकर हिफाजत के ठिकाने पहुँचा जायगा।

जान्हवी—यह सब नील नगर पहुंचने के बाद बताऊंगी। देखना, अबकी मैं अपने को एकहो लगानेवाला बाबाजी को कैसा छकाती हूं।

किरण—अब यहां से नीलनगर कितनी दूर पर होगा?

जान्हवी—बस, अब जिस तेजीके साथ चले आए हैं, उसी तेजी के साथ चले चलेंगे तो दो घण्टे के भीतर ही पहुंच जायगे।

किरण—क्या तुम यहाँ कई बार आचुकी हो?

जान्हवी—हां, कई बार भी आचुकी हूँ और यहां के हाल से भी रत्ती रत्ती वाकिफ़ हूं। मगर देखें-अबकी का मेरा परिश्रम ठिकाने लगता है या नहीं।

कादम्बिनी—तुम जिस काममें हाथ डालती हो, वह काम पूरा उतरे विना हर्गिज नहीं रहता।

कुसुम—तुमने औरत होकर बड़े-बड़े मर्दोंतकका कान काट डाला। मैं समझती हूं, तुम्हारे सामने ठहरने वाले कोई भी न होंगे।

जान्हवी—यह सब ईश्वरकी मेहरबानी है, नहीं तो मैं अकेली, तिसपर दुःख और शोक से मरी हुई औरत क्या कर सकती हूं।

किरण—हां बहन, तुम अपना हाल कहने वाली थी, मगर कहा नहीं। देखो-इस समय सब सवार खाने-पीने के फेर में लगे हुए हैं-हो सके तो-कुछ अपना हाल बताओ? हमलोगों का दिल इस के सुनने के लिए तड़प रहा है।

जान्हवी—इस समयका मौका ज़रा ठीक नहीं है। मैं

सब कुछ बताऊंगी, तुमलोग घबड़ाती क्यों हो। सब से पहले ठिकाने पहुँचकर मैं तिलस्म में घुसनेकी ताली तो अपने हाथ करलूं।

विक्रम—ठीक है,-ये जाती कहां है। आज नहीं कल तो जरूर ही बतावेंगी। अच्छा, अब नीलनगर पहुंच कर ही सुस्ताना अच्छा होगा।

जान्हवी—हां, अबतो थकावट भी मिटगई, उठो, चलनेकी तैय्यारी करो। यहां जितनी देर तक हमलोग रहेंगे उतनी ही देर में वहां पहुँचजायँगे। अगर बाबाजी की बेहोशी बीचही में टूटगई तो, बड़ाही ऊधम मचावेगा। वह कुछ भी नहीं है तब भी तिलस्मका दारोगा रह चुका है, उसके पास अब भी बहुत कुछ तिलस्मी सामान है। यह सुनकर विक्रमसिंह ने सवारों को तैय्यार होने का हुक्म दिया। वे सब चट-पट तैयार होगए। माधवी ने घोड़े को जोतकर गाड़ी तैय्यारकी। पांचो औरतें गाड़ी पर सवार होगई। सबके सब पहले की तरह आगे-पीछे होकर चलने लगे। लगातार दो घण्टे तक चलने के बाद ये लोग एक बहुत बड़े शहर में पहूँचे। वहां पहुंचते-ही जान्हवी ने धीरेसे विक्रमसिंह को पास बुलाकर कहा, तुम तो यहां कभी आए नहीं हो, इसलिए यहां की हालात से वाकिफ नहीं हो। उस अफ़सर से कहो, वह आगे बढ़कर रंगूनी सराय की तरफ ले चले। मगर देखो, उसको शक होने न पावे। यह सुन विक्रमसिंह ने उस सवार को बुलाकर कहा, तुम दो सवारों को लेकर रंगूनीसराय की तरफ बढ़ो। देखो,-वहां हमलोगों को रहनेके लिए काफी जगह है या नहीं?

अफ़सर—क्या आप राजा साहेब के यहां न उतरिएगा?

विक्रम—नहीं, मैं इस समय उनसे मिलना नहीं चाहता।

कल जाती बेर मैं उनसे मिलकर चलाजाऊंगा। यह सुन वह अफ़सर दो सवारों को लेकर अदब के साथ आगे बढ़ा। गाड़ी उसके पीछे-पीछे जाने लगी। कुछही मिनटोंके बाद अफ़सर ने वापस आकर—वहां पर्याप्त जगह होने की सूचना दी। ये सब धीरे-धीरे रंगूनी सराय के फाटक पर पहुंचे। सराय किसी रईश के महलकी तरह बड़ी खूबसूरती के साथ बन हुई थी। सरायवाले ने इन सबोंको बड़ी खातिरी के साथ उतारा। दुमञ्जिले के एक बहुत बड़े कमरे में औरतें सब चली गईं। बिक्रमसिंहने जसवन्तसिंह को उनके बगलही की एक छोटीसी कोठरीमें रक्खा। बेहोश अच्युतानन्दभी उन्हीके पास एक पलंगपर डाल दिया गया। सवार लोग घोड़ेको तबेले में बांध सराय के फाटक पर पहरा देने लगे। माधवी भी गाड़ी घोड़े को तबेले में रख—शहर की तरफ निकल एक मनिहारिन का वेषले कुमारियोंके कमरे में पहुंची। जान्हवी ने बहाना करके उसको रातभर वहीं रहने के लिए कहा। इन सब कामों के बाद सबों ने खाया पिया। बिक्रमसिंह ने अफसर को बुलाकर कई हजार अशर्फी देते हुए कहा,—"मेरा काम होगया, ये सब भी कब्जे में आगईं। तुम अब अपने सवारों को लेकर सवेरे वापस चले जावो। मैं अब सीधे इन सबोंको लेकर बहुरानी के पास जाता हूं। इन लोगों के ऐयारों में जो बेहोश हुवा है, वह बड़ाही उपद्रवी है, उसको तो इसी के बगलवाले थाने में छोड़ देता हूं, दूसरा अपने माफिक होगया है, इसलिए उसको अपने साथही लिए जाता हूं। तुम इन अशर्फियों में से अपने सवारों को पच्चीस २ अशर्फी देकर बाकी अपने लिए रख लेना।

अफ़सर—इतनी जल्दी क्या है, हमलोग आपको कटक तक पहुँचाकर आवेंगे।

बिक्रम—नहीं नहीं, इसवक्त तुम्हे अपने ठिकाने पर मौजूद रहना वाजिब है। मैं तो यहां हर जगह से अपनी मदद ले सकता हूँ। तुमने सुना नहीं है,—नरेन्द्रसिंह बहुत बड़ी फौज को लेकर हजारीबाग से होते हुए तिलस्म पर चढ़ाई करने वाले हैं।

अफ़सर—जीहां, यह तो मैं सुन चुका हूं।

बिक्रम—फिर ऐसी हालत में तुम अपनी जगह से कैसे हट सकते हो ?

अफ़सर—जैसी आप आज्ञा दें। मगर मेरातो जी नही चाहता है।

बिक्रम—(बात काटकर) नहीं नहीं, अब मैं तुम्हे यहां से आगे लेजाकर बड़ा भारी हर्ज नहीं कराना चाहता।

अफ़सर—तो मैं सवेरे ही चला जाऊंगा। मगर आप राजा साहेब से मिलकर जरूर पचास साठ सवारों को अपने साथ लेते जाइएगा। दुश्मनोंका क्या ठिकाना,-न जाने उनकी नीयत कब क्या हो।

बिक्रम—ठीक है, मैं जाती बेर राजा साहेबसे मदद लेता जाऊंगा। अच्छा, अब तुम जावो, आराम करो। अफसर सलाम करके चला गया। उसके जानेके बाद सरायवालेको बुलाकर उन्होंने दोसौ अशर्फीयां दी। सरायवालेका दिल बाग़बाग होगया। उसको विदाकर विक्रमसिंह कुमारियों के कमरे में आए। उन्हे देख जान्हवी ने कहा,—अब आवो, बैठ जावो, अब निश्चन्तता के साथ कुछ कामकी बातें करें। इसके बाद घण्टे भरतक धीरे-धीरे उन सबों में बात-चीत

होती रही। चारो तरफ दीया जल चुका था। धीरे-धीरे सन्ध्या बीतकर रजनीकी गहरी कालिमा आरही थी, ऐसे समय उसी अफ़सर ने आकर. बिक्रमसिंहके हाथ में एक पुर्जा दिया। उन्होंने उसको पढ़ा, पढ़ते ही खुशी के साथ उस पुर्जे को जान्हवी के हाथमें देकर उस अफसर से कहा,—तुम उस आदमी को फौरनही यहाँ भेजदो। वह इतना सुनतेही, सलामकर चला गया। उसके जानेके बाद उन्होंने कहा,—अब इससे मिलनेके बाद इधरका हाल हम लोगों का अच्छी तरह से मालूम होजायगा। उनके मुंह से इतनी बातें मुश्किल से भी निकलने नहीं पाई थी, जान्हवी ने चिल्लाकर कहा—धोका बिलकूल धोका, देखो मेरे हाथ के पुर्जे से बड़ी तेज बेहोशी की बू आरही है और इसी से मैं बेहोशभी होती जारही हूं। तुम लोग संभल जावो। इतना कहते कहते वह बेहोश होकर लेट गई। बांकी की और सब औरतें भी फैली हुई तेज बेहोशी से नशेकी तरह झूमने लगी। बिक्रमसिंह की भी हालत ख़राब हो रही थी, परन्तु उन्होंने बड़ी फूर्त्तिके साथ बाहर निकलकर जसवन्तसिंह को बुला,—बेहोश होते-होते इधरका थोड़ा बहुत हाल कह सुनाया।

तीसरा बयान ।

"शेरका सा दिल कड़ा, जबतक रहेगा पास में ।
तबतक बनेगा काम सब, अमृत बहेगा सांसमें ॥

जयदेव और चपलाने चौंक कर पीछेकी तरफ देखा। तीन घुड़सवार तेजी के साथ इन्हीं की ओर आते दिखलाई पड़े। उनको देखतेही चपलाने जल्दी से खञ्जर निकाल कर कहा—तुम भी संभल जावो, मालूम होता है, हमारे दुश्मन हम लोगों को घर दबानेके लिए आए हैं। जयदेव ने अपने बटुए में से तीन गोला निकालकर हाथ में लिया। इतनेही में वे तीनों सवार इन लोगों के पास आपहुंचे। पास आनेपर इन लोग ने देखा,आगे आगे दो सवार हैं,—उन दोनों में से एक बत्तीस चौतीस बरसकी निहायत ही खूबसूरत औरत है, दूसरा एक अत्यन्त सुन्दर नौजवान है। उसके पीछेका सवार एक पचास पचपन्न बरसका रोबिला बुड्ढा है। उन तीनों में से उस औरत ने इन दोनों के पास आतेही बड़ी मीठी और सुरीली आवाज से हँसती हुई कहा,—तुम दोनों ने अपनी असली सूरत को रङ्गकर बदलतो डाली है मगर भारतवर्ष के प्रतापी महाराज नरेन्द्रसिंह केऐयार जयदेवको और उनकी प्रियतमा चपलाको

मैं पैरों के चिन्ह से ही पहचान गई थी, इसलिए—तुम दोनों का नाम लेकर मैंने पुकाराथा। मेरी ऐसी बातें सुनकर तुम दोनों को कुछ ताज्जुब और कुछ दिल्लगी सी भी मालूम पड़ती होगी,—मगर नहीं—मेरा नाम सुनोगे तो जरूर यह सब ख्याल तुम दोनों के दिल से जाता रहेगा।

जय—खैर तो आप अपना नाम सुनाकर हमलोगों को तसल्ली कब देंगी ?

औरत—घबड़ावो नहीं, मैं अभी सुनाती हूँ। मगर सब से पहले तुम दोनों को मेरे बगल वाले नौजवान से परिचय कराहूँ तब सुनाऊंगी। आप भूपाल के राजकुमार चन्द्रदेव हैं। अपने कई एक ऐयारों को साथ ले हमारी राजकुमारी कुसुमलताके फिराक में आप इधरही आरहे थे इत्तफाक से मेरे साथ भेंट होगई। मैं चुनारगढ़के महाराज इन्द्रजीतसिंह के एक प्रसिद्ध ऐय्यार (हाथसेबताकर) वह पीछेके वृद्ध महात्मा भूतनाथजी हैं, उन्हीके साथ आरहीथी, आपको देखतेही पहचान गई। मैंने अपना परिचय दिया। परिचय पातेही आप बहुत हीप्रसन्न हुए। फिरतो मैंने आपको तिलस्मी सरज़मीन के भीतर घुस, तुम्ही लोगों से मिलकर कुमारी कुसुमलता को पानेकी तरकीब बतादी। यह सुनतेहीं, दोनों ने कुमारको झुककर प्रणाम किया। भूतनाथ से साहब सलामत हुई। कुमार ने प्रसन्न हो प्रणाम का जवाब देकर कहा,—मैं तुम दोनों से मिलकर बहुतही प्रसन्न हुवा। अब मुझे उम्मीद हो गई कि मेरा काम शीघ्रही हो जायगा।

जय—आपके ऐयारों में से तो कोई भी नहीं दिखलाई पड़ते, क्या वे सब पीछे २आरहे हैं ?

चन्द्र—नहीं, उन सबोंको (औरत की तरफ़ बताकर)

इन्होंने, एक दूसरे ही रास्ते से सम्भलतुर भेज दिया,—और आप केवल भूतनाथ जी को लेकर मुझे तुम्ही दोनों से मिलाने के लिए इस रास्ते से ले आई !

जय—(औरत से) क्या आप अपना परिचय अब भी न देंगी ?

औरत—(हंसकर) क्या तुम अनुमान से भी नहीं पहचानते, देखो, चपला मुझे गौर से देख रही है । वह अवश्य मुझे पहचान गई होगी । कहो, प्यारी चपला ! मेरा अनुमान ठीक है या नहीं ?

चपला—"बेशक, मैं आपको पहचान गई हूं । (प्रणामकर) आपका नाम मदनमोहनी है आपका और अद्भूतनाथ का रहस्य भूतनाथजी के रहस्यों से भी गूढ है । आप दोनों ने अपने ज़माने में बङ्गाल, बिहार, आसाम, उड़ीसा तक की सरज़मीन को दहला दिया था । अब भी यहां के बदमाश लोग आप दोनों का नाम सुनकर थर्रा उठते हैं । मगर यह तो बताइए—आप यहाँ कैसे आ गईं ?"

मदनमोहनी—"मैं सोने के तिलस्म में घुसी हुई कुमारी सरोजिनी और उनके दोनों भाइयों को निकाल बाहर करने की कोशिश में लगी हुई थी । उसी के बीच में-मुझे अद्भूतनाथ से मिलकर एक छोटी सी किताब लेने की जरूरत आ पड़ी, इस लिए मैं तिलस्म से बाहर निकल-मधुपुर से होती हुई आई । मुझे तिलस्म ही के अन्दर महाराज नरेन्द्रसिंह और महारानी किशोरी के आने की ख़बर लग चुकी थी । वे उस समय वहाँ से तीन चार कोस की दूरी पर एक घने जंगल में अपनी फ़ौज के साथ डेरा डालेहुए पड़े थे । मैंने सोचा— जब आही गई हूँ तो, महाराज और महारानी से भेंट

करती जाऊं। मैं ख़ास महाराज के तम्बू में पहुंची। उस समय उसी शहर की महारानी अम्बालिका और उसकी मुंह लगी सखी राजेश्वरी भी वहीं बैठी हुई उनसे मिन्नत कर रही थी। मेरे पहुंचते ही वे दोनों घबड़ा उठीं। मैंने महाराज को उनदोनो से सचेत करदिया। अम्बालिका दांत पीसती हुई राजेश्वरी को लेकर वहां से चली गई। महाराज मेरे पहुँचने से बहुत ही प्रसन्न हुए। महारानी किशोरी ने मुझे गले लगा कर—अपना हीरेका हार पहनाया। मैं फिर घण्टे दो घण्टे रह—उन सबों को-जो कुछ करना उचित था समझा कर अद्भुतनाथ को खोजती हुई इधर चली आई!

जय—तो महाराज और महारानी इस समय कहां हैं?

मदन—वे कुछ दिनों तक वहीं रह, उस शहर को अपने कब्ज़े में कर हज़ारीबाग़ से होते हुए यहीं आ जायंगे। अभी वे वहीं हैं।

चपला—"अद्भूतनाथ से आपकी भेंट होगई?

मदन—अभी कहां? परन्तु आज उनसे जरूर भेंट हो जायगी।

जय—क्या वे भी सम्भलपुर ही में हैं?

मदन-हां, मुझे रास्ते हीमें मालूम हो गया था कि वे सम्भल र में कई दिनों तक रह कर कोई कारवाई करेंगे। इसीलिए मैं कहती हूँ कि वे अब तक वहीं होंगे और आज मुलाकात हो जाएगी। हां, एक बात तो तुम लोगों ने सुनी ही न होगी। विक्रमसिंह और जसवन्तसिंह भी कुमारी कुसुमलता, किरणशशी, कादम्बिनी, सरला वगैरह को लेकर कल रात के वक्त इसी तिलस्म का एक प्रधान शहर नीलनगर में पहुंच गए हैं। उन्होंने अपनी चालाकी से स्वामी अच्युतानन्दको भी फंसा

लिया है। मैं अब आपको (कुमार की तरफ़ इशारा कर) आज ही अद्भुतनाथ और भूतनाथ को साथ लगाकर नील नगर की तरफ़ भेज देती हूं।

जय—आपकी मैंने जैसी तारीफ़ सुनी थी, उससे भी बढ़ कर काम करते हुए देखा। आपने औरत होकर......

मदन—(बात काट कर हंसते हुए) बस बस, जयदेव, तुम तारीफ़ का पुलाव पकाकर मुझे उसकी खूशबू में मत उड़ावो। तुम लोगों के सामने मैं कौनसी चीज़ हूं। जो कुछ भी मेरे हाथों से हुवा करता है, वह मेरा किया नहीं, ईश्वर की मेहरबानी है।

जय—यह आपकी सौजन्यता का बर्ताव है-नहीं तो कहां आप कहां हम लोग, ज़मीन आसमानकासा फ़र्क़ है। (भूतनाथ की तरफ़ देख कर) अच्छा, यहां आप कैसे आए?

भूत—(अपना पिछला हाल बताकर) इस तरह पर खोजते-खोजते जब परेशान होकर मैं अपने महाराज के पास यह सब समाचार सुना, हमारे तिलस्म के दारोगा इन्द्रदेव को अपने साथ लाने के लिए लौटा जा रहा था, इतने में इनसे भेंट हो गई। अब मैं कुमारी को साथले चुनारगढ़ लौट जाऊंगा।

चपला—वह वहां जाना पसन्द करती तो उधर ही से-न आपके साथ चली जाती। अब आ गई हैं तो-बिना कुमार को तिलस्म से बाहर किए हर्गिज़ न लौटेगी।

मदन—हां, चपला ठीक कह रही है। मैं भी तो तुमसे यही सब बातें कहती हुई आ रही थी। अच्छा, अब इस तरह खड़े-खड़े बात चीत करने में किसी को सुबहा भी होगा, चलो,—जिस सराय में कुमार के ऐयारों को पहुँच कर ठहरने के लिए कहा है; वहीं चलकर आराम करें। आज रात को

चपला के साथ मैं महारानी मायादेवी से मिलने आऊंगी। इतना कहकर उसने घोड़े को आगे की तरफ बढ़ाया। सब कोई उसके साथ ही साथ धीरे-धीरे चलने लगे। रास्ते भर मदनमोहनीने कुमार चन्द्रदेवसे-कुमारी कुसुमलताके निकल आने से लेकर-स्वामी अच्युतानन्द के हाथ तक पहुंच—जान्हवी के हाथों से छूटने तक की एक। एक बातें कह सुनाई। जिसको सुनकर कुमार के अफ़सोस का ठिकाना नहीं रहा। घण्टे डेढ़घण्टे तक इसी तरह चलने के बाद ये लोग संभलपुर के "माया महल" नामक एक सराय में पहुंचे। वहां चार पांच आदमी पहले ही से पहुँच, सब तरह का बन्दोबस्त मिला, इन लोगों का इन्तज़ार कर रहे थे। इन लोगों के वहां पहुंचते-ही उन लोगों ने-इन लोगों को तीमञ्ज़ले के एक सजे-सजाए कमरे में ले जाकर उतारा। वहां उन लोगों ने इस कमरे के अलावे कई एक और भी कमरा बन्दोवस्त कर रखा था। उस कमरे में पहुंचते ही—सभों ने हम्माम में जाकर नहा-धो कुछ जलपान किया। इतना कुछ करते-धरते सन्ध्या हो गई-विजुली की रोशनी से कमरा जगमगा उठा। चारों तरफ़ की खिड़की खोल दी गई, ठण्डी-ठण्डी हवा आने लगी। कुमार एक मखमली गद्दी पर बैठे, उनके सामने ही उससे कुछ छोटी गद्दी पर चपला को लेकर मदमोहिनी बैठी। भूतनाथ और जयदेव नीचे कालीन पर बैठ गए। कुमार के दो आदमी कमरे के बाहर पहरा देने लगे। बाकी के और सब किसी कार्य्य से इधर-उधर घूमने चले गए। कुछ देरतक गप-शप होनेके बाद, मदनमोहनी ने कुमार को तरफ़ देखकर कहा—अब मैं चपला और भूतनाथको लेकर मायादेवी के पास जाती हूँ। भरसख आज ही रात को लौट आऊंगी—न हो सका तो भूतनाथ को

लौटाकर कल सवेरे तक आप लोगों से आकर मिलूंगी । यहां आपके पास जयदेव भी हैं—साथ ही आप भी ऐयारों से कम होशियार नहीं हैं, इस लिए कुछ चिन्ता की बात नहीं है ।

चन्द्र—नहीं नहीं, चिन्ता की कौनसी बात है—तिसपर आप भी तो मुझसे बहुत दूर नहीं रहेंगी ।

मदन—फिर आप मुझे आप आप कहने लग गए । अगर फिर आपने ऐसा कहा तो मैं लौटकर न आऊंगी ।

चन्द्र—नहीं नहीं, एक बार के लिए माफ़ करना ! फिर कभी मैं तुम्हें आप न कहूंगा । गलती सबों से हुवा करती है । उनकी बातें सुन सब कोई हँसने लगे, कुमार भी हँसने लगे- इसके बाद बहुत कुछ समझा बुझाकर चपला और भूतनाथको साथले अपनी असली सूरतमें मदनमोहनी कमरेसे बाहर निकल आई । उस समय घण्टे भरके क़रीब रात जा चुकी थी । चांदना निकल आया था । सड़कों पर गैसकी रोशनी हो रही थी; हर एक दूकानों में बिजुली की रोशनी जगमगा रही थी। ये तीनों कई एक बाजारोंको पार कर एक खूबसूरत पूल परसे होते हुए महल के पास पहुंचाही चाहते थे, इतने में पीछे से किसी ने आकर मदनमोहनी के कन्धे पर हाथ रक्खा । जिससे वह तेजी के साथ घूम कर उसको देखने लगी ।
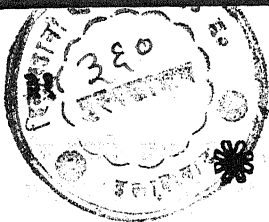
❀ चौथा बयान ❀

"दिल दिया तुमने जहाँ, दिलको कभी मत फेरना।
नीच धमकाते रहें—देखा करो तुम घेरना॥"
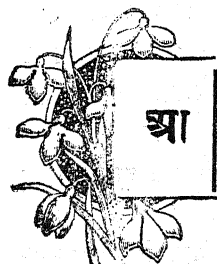
आज बहुत दिनों के बाद रायगढ़ के महाराज शिवप्रतापसिंह के महल में, एक बहुत बड़े सजे-सजाए कमरे के निहायत ही खूबसूरत मख़मली गद्देदार पलंग पर कुमारी सावित्री को अभी-अभी जाग कर बैठी हुई देख रहे हैं। सुबह का समय है। खुली हुई खिड़कियों से ठण्ठा-ठण्डी हवा आ रहीहै। पलंगके पास ही कुछ अदबके साथ तीन चार खूबसूरत-खूबसूरत लौंड़ियां, गङ्गाजलीमें पानी, रूमाल और मञ्जन लिए खड़ी हैं। कुमारी साबित्री आंखें फाड़-फाड़ ताजुब के साथ इधर-उधर देख रही हैं। उसको ऐसा करते देख उन लौंडियों में से जिसके हाथ में रूमाल था, उसने कुछ आगे बढ़ कर नम्रता के साथ सावित्री से कहा—"अभी उठने की इच्छा न हो तो घण्टे दो घण्टे और भी सो सकती हैं। महाराज ने जब तक सोती रहें—सोने देने की आज्ञा दे रक्खी है। यदि उठना हो तो, लौंडियां हाज़ीर हैं, आप नित्य कृत्य से निवृत्त हो सकती हैं।"

सावित्री—नहीं, अब मुझे सोने की इच्छा नहीं है, मगर

यह तो बताओ, यह महल किसका है, तुम सब किस की लौडियां हो, मुझे कब और किसने उठाकर यहां, इस हालत में ला रक्खा है ?

लौंडी—हम सब रायगढ़ के महाराज शिवप्रतापसिंह की लौंडियां हैं । इस समय आप उन्हीं के महल में बैठी हुई—इस तरह इस लौंडी से बातें कर रही हैं । आप आज रात को नौ बजे के क़रीब बेहोशी की हालत में यहां लाई गई थीं । जब से आप आईं हैं तब से हम लोग इसी कमरे में आपकी खिदमद् के लिए मुकर्रर हुई हैं । इसके अलावे और इस लौंडी को कुछ मालूम नहीं है ।

सावित्री—(सोचकर) ठीक है,—अब मैं सब कुछ समझ गई, खैर यह तो बतावो, तुम्हारा नाम क्या है ?

लौंडी—इस दासी का नाम तरणी है । (एकको दिखाकर) इसका नाम भामा है। (दूसरी को दिखाकर) इसका नाम गङ्गा है (तीसरी को दिखाकर) इस का नाम रोहिणी है ।

साबित्री—अच्छा तो तरणी, तुम यह तो बता सकती हो कि-मुझे किस गरज से महाराज ने अपने यहाँ इस तरह उठा मँगाया है ?

तरणी—ठीक-ठीक तो नहीं मगर अन्दाज से कह सकती हूँ कि हमारे कुमार विनोदसिंह के साथ शादी करने के लिए किसी तरह उठा मंगाया होगा । क्योंकि जितनी खूबसूरत आप हैं, हमारे कुमारभी करीब करीब उतनेही खूबसूरत हैं । मैं जहांतक समझती हूं, आप दोनों की जोड़ी इस संसार में बहुतही अच्छा दिखलाई पड़ेगी । हमारे कुमार इस समय सब बातों में बड़ेही लायक हो आए हैं । तरणी की ऐसी बातें सुन सावित्री के कलेजे पर बड़ी कड़ी चोट लगी । उसे कुछ

रूखाई के साथ उसकी तरफ़ देख कर कहा—"बस बस, तुम अपने कुमार की तारीफ़ बहुत ज्यादा मुझ से मत करो। मैं विनोदसिंह को तो क्या, उनके गुप्त से गुप्त हाल को भी अच्छी तरह जानती हूँ। सावित्री को इस तरह कहते हुए देख, तरणी घबड़ा गई और उसने हाथ जोड़कर कहा—मैंने जो कुछ भी आप से निवेदन किया—उसमें राई रत्ती भी झूठ नहीं है। मगर—आगे आप मालिक हैं-जैसा समझें वैसा कहिए-मैं उसमें कुछ भी दख़ल नहीं दे सकती।

सावित्री—"ख़ैर तुम्हारा क्या दोष है। तुम तो उनकी तारीफ़ ही करोगी। तुम्हें करना भी वाजिब ही है। मगर—मेरे सामने—जब तक मैं यहां हूं, आयन्दा उनकी तारीफ़ हर्गिज न करना। मैं ऐसा क्यों कह रही हूं—उनसे और मुझसे कुछ दुश्मनी नहीं है—उन्होंने मेरा आज तक कुछ बिगाड़ा नहीं है परन्तु उनकी हालत को अच्छी तरह जानती हूँ इसलिए उनकी बातें सुनना नहीं चाहती। हां, तुम्हारे महाराज बहुत ही लायक हैं, वे किसी के ऊपर अन्याय नहीं करते। और इस समय-जहांतक मैं समझती हूं, मेरे ऊपर भी अन्याय नहीं करेंगे।

तरणी—जोहां, वे अपने न्याय से इस समय महाराज नरेन्द्रसिंह से भी बढ़ कर समझे जाते हैं।

सावित्री—मैं तुम्हारी बातों को मानती हूँ। इन्होंने अपने इन्शाफही के बल से तिलस्म की महारानियों तक को शिर उठाने नहीं दिया है। खैर—इन सब बातों से क्या मतलब? तुम—यह बतावो, इस समय महाराज कहां हैं?

तरणी—वे महारानी के साथ अपने कमरे में होंगे। क्या मैं उन्हे जाकर आपके जाग उठने की ख़बर दूँ?

सावित्री—हां, उनसे कहदो कि,—मैं दर्शन करने के लिए हाज़िर हुवा चाहती हूं। इतना सुनते ही तरणी कमरे के बाहर चली गई, उनके जाने के बाद रोहिणी की तरफ़ देख कर सावित्री ने कहा—मैं जल्दी से नहाकर अपने को दुरुस्त कर लेती हूँ। तू मुझे हम्माम में ले चल। उसने उसको उसी दम आगे की तरफ़ बढ़कर—एक बन्द दरवाज़े को खोल हम्माम में ले आई। सावित्री ने जल्दी-जल्दी से निपट कर नहाया। भामा ने बदलने के लिए एक बहुत ही बढ़िया साड़ी दिया। गङ्गा ने रूमाल से बदन पोंछकर उसके बालों को दुरुस्त कर दिया। आध घण्टे के भीतर ही सब कामों से छुट्टी पाकर सावित्री उसी कमरे में आई। उस समय वहाँ चालीस पतालीस बरस का एक रोबिला आदमी, एक पैंतीस छत्तीस बरस की खूबसूरत औरत के साथ, कोंच पर बैठा हुआ हम्माम के दरवाज़े की तरफ़ टक-टकी बांधे देख रहा था। उनसे कई क़दम पीछे हटकर तरणी के साथ बीस-पचीस लौंडियां हाथ बांधे खड़ी थी। सावित्री ने उन दोनों के ऊपर निगाह पड़ते ही पहचान लिया, और शिर के कपड़े को कुछही भर नीचे की तरफ़ खींचती हुई आगे बढ़कर उन दोनों को प्रणाम किया। उसके उत्तर में आशीर्वाद देते हुए महाराज ने कहा—आवो बेटी सावित्री, आवो, इस कोंच पर बैठ जावो। तुम्हें हम लोगों से शरमाने का कोई काम नहीं है?

सावित्री—मैं क्यों शरमाऊंगी महाराज, आप मेरे पिता के दोस्त हैं, इस हिसाब से भी, और बड़े हैं इस हिसाबसे भी पिता के तूल्य हैं। इसलिए—अपने पिता-माता के साथ अपनी लड़कियां क्यों शरमाएगी। मैं आप दोनों को वैसेही

समझती हूँ, जैसा विलासपुर के राजमहल में अपने माता-पिता को समझती थी।

महारानी—(प्रेम से उसको उठकर अपनी बग़ल में बैठाती हुई) बेटी, मैं तुम्हारी बातों से बहुत ही प्रसन्न हुई। कहो इस समय तुम्हारी तबीयत कैसी है?

सावित्री—मेरी तबीयत बिलकूल ठीक है मा, परन्तु मुझे इस बात का बड़ाही आश्चर्य हो रहा है कि—मैं कैसे आप लोगों के पास-इस महल में एकाएक आपहुँची?

महाराज—तुम्हे कटककी महामाया के किसी तिलस्मी मकान से निकाल, हज़ारीबाग़ के नवाव नशीरुद्दीन के नौकर अपने मालिक के पास लिए जारहे थे। हमारे ऐयारों ने देखा—देख कर उनसे छुड़ा, तुम्हें कलरात को यहां ले आए!

महारानी—मैं रातदिन तुम्हारी ही चिन्ता में घुली हुई रहती थी। मुझे—जब तक-तुम न मिली, खाना—पीना भी नहीं सुहाता था। न जाने क्यों—जिस दिन से तुम्हारी उभड़ती हुई-जवानी की तस्वीर देखी, तुम्हारे ऊपर मेरी मुहब्बत बढ़ती ही जाने लगी। आज तुम्हें पाकर, तुम्हें सहीसलामत देखकर मेरा कलेजा बड़ाही ठण्डा हुवा। अब मैंने समझा कि—विधाता ने मेरी तपस्या को देखकर मुँहमांगा रत्न मुझे दिया।

सावित्री—(मनही मन कुढकर) यह बहुत ही अच्छा हुवा कि मैं दुश्मन के हाथ से निकल कर आप लोगों के पास पहुँच गई। नहीं तो मुझे सताने में वे सब कोई बात बांकी उठा नहीं रखते।

महाराज—वेशक, वह ऐय्याश-परस्त नव्वाब तुम्हें पाता तो जरूर ही सताता, खैर परमात्मा की मर्ज़ी से, तुम

बच कर यहां आ गई हो। अब तुम राज़ी खुशी के साथ अपना ही घर समझ कर यहां रहो।

महारानी—अब मैं इसे जानेही कब देती हूँ। जब—तक जीती हूं तब तक इस घर की शोभा का बढ़ाती हुई रहो।

सावित्री—यह कैसे हो सकता है माँ, (कुछ जोशके साथ) मैं पराए की चीज़ हो चुकी हूं। मुझे अब यहां दो एक रोज़ के अलावे ज्यादे दिन तक ठहरना ठीक नहीं है। हां, मैं आप लोगों का एहसान कभी भूलूंगी नहीं। यदि ईश्वर ने चाहा तो—कटक के तिलस्म टूटने के बाद—मैं किसी के साथ आकर एक आध महीना यहां अवश्य रह जाऊंगी। उस समय इस एहसान के बदले में जो कुछ भी मुझसे हो सकेगा आप दोनों की सेवा भी करूँगी।

महाराज—मैंने तो और ही ख्याल करके तुम्हे यहाँ उठा मंगाया था बेटी, क्या तुम मेरे घर पर नहीं रहा चाहती हो?

सावित्री—क्यों नहीं रहा चाहती. मगर मैं उसी तरह से रहा चाहती हूं—जिस तरह से अपनी बेटी ससुराल से आकर मैके में रहा करती है।

महाराज—(दुःखी होकर) तुम्हें क्या मेरे महल में और तरह से रहना पसन्द नहीं है?

सावित्री—आप तो महाराज, इन्शाफ़ के बड़ेही धनी हैं। अतएव आप खुद बतलाइए कि एक आदमी को अपना दिल देकर फिर अधर्म से दूसरे का हाथ कैसे थाम सकती हूँ?

महारानी—अभी तो तुम्हारी न मंगनी ही हुई है, न किसी के साथ तिलक ही चढ़ चुका है, फिर भी इसके बीच में यदि तुम्हारी शादी लग जाय तो इसमें अधर्म ही कौन सा है?

सावित्री—(तेज़ी के साथ) ठीक है मा, कुछ भी अधर्म

नहीं है । क्षत्रियों की कन्याओं को कुछ भी अधर्म नहीं है, धर्म है वैश्यों को, शूद्रों को, उस से भी नीच ज्ञातियों को। क्या आप जो कुछ भी कह गईं वह अपनी गरज़ से धर्म्म मानकर कह रही हैं या दूसरे की गरज़ मानकर कह रही हैं।

महारानी—(कुछ शर्मा कर) नहीं बेटी, तमाम दुनियां के धर्म को देख कर कह रही हूं। क्या किसी को कायदे के साथ वरण किए बिना, दिलसे सोचते ही—दूसरे को वरना अधर्म समझा जाता है ।

सावित्री—यह तो आप इस पवित्र भारतवर्ष में जन्मी हुई सती-साध्विओं के कर्त्तव्योंसे पूछ सकती हैं। क्या अपने-को गृहणी बनाने का उच्च विचार रखने वाली क्षत्राणियों ने एक बार किसी को दिल देकर फिर किसी दूसरे का हाथ थामा है ? अगर ऐसा करती तो सावित्री का, दमयन्ती का, रुक्मिणीका आज दिन तक वह पावन नाम कभी जीता जागता होकर इस संसार में न रहता ।

महाराज—बेटी, ज़रा खामोश हो जावो । इस समय बेहो-शीकी वजह से तुम्हारा दिमाग़ कुछ कमज़ोर हो रहा है । खा-पीकर निश्चिन्त हो दो चार घण्टा आराम के साथ सो रहो। यह सब बातें फिर भी पीछे होती रहेगी ।

सावित्री—आप मेरे पिता के तूल्य हैं और मुझे बचाकर तो आप पिता से भी बढ़कर हुए हैं। मेरी आपके पास यही प्रार्थना है कि—किसी हालत में भी मुझे अधर्म्म के साथ मिलने का विचार सामने आकर आत्महत्या करने का मौका न दीजियेगा । उसकी ऐसी बातें सुन दोनोंके दोनों दिलमें बहुतही दुःखी हुए,—परन्तु बाहर से उन्होंने कुछ भी नहीं कहा । इसके बाद लौंडियों को समझा बुझा, वहां

से उठकर चले गए। सावित्री उनके भावों को समझ गई। उसने मनही मन सोचा-इस समय तो ये दोनों बातों में परास्त होकर चले गए हैं, परन्तु मेरे ऊपर ज्यादती किए बिना कभी न छोड़ेंगे। मगर मैं भी दिखा दूँगी कि, पिंजरे में फंसकर भी शेरनी क्या कर सकती है। इसके बाद वह धीरे-धीरे उसी कमरे में टहलने लगी। महाराज और महारानी के जाने के बाद, उन पहले की चार लौंडियों को छोड़ और सब उनके साथही साथ चली गईं थी। सावित्री को इस तरह टहलते देख तरणी ने साहस करके कहा,-अब भोजन करके आराम करती तो हमलोग आपकी सेवा से सुख उठाती। उसकी ऐसी नम्रता के साथ कही हुई बात सुन सावित्री ने कहा,-तरणी, तुम लौंडियों में बहुत ही समझदार मालूम पडती हो, अतएव तुम्हीं बताओ-यहां पर सुनी हुई मन्शाय और मेरे दिल पर मजबूती के साथ बँधी हुई बातों के आशय को मिलानकर-भविष्य में होनेवाली जबर्दस्ती को अपनी आंखो के सामने प्रत्यक्ष रूप से नाचता हुई देखकर भूख मुझे किस कदर मालूम पड़े और साथ ही आराम करने का दिल भी किस कदर हो, मगर नहीं—मैं जबतक बची हुई हूँ,—चिन्ता में पड़कर खाए बिना अपनी ताकत को, और आराम किए बिना अपने जोश को किसी तरह भी कम करना नहीं चाहती हूँ। यह आनेवाली मुसीबत का सामना तो मैं खुशी-खुशी कर लूंगी,—मैं इसको कुछ समझती भी नहीं हूं, क्योंकि मैं-ने जिस दिन से बिलासपुरका राजमहल छोड़ा है—इस से भी कई दर्जे बढ़कर मुसीबत झेल चुकी हूँ, इसलिए किसी से भी डरती नहीं हूं। अतएव—जा, तू मेरे लिए खाना ले आ, मैं यहीं बैठकर खाऊंगी, और यहीं आराम भी करूंगी। उसकी

ऐसी बातें सुन तरणी जाया ही चाहती थी, इतने में एक लौंडी ने आकर सावित्री से कहा,-आप के साथ कुमार मिलना चाहते हैं ? सावित्री ने उसकी बातें सुनकर कहा,-ठहरो, मैं इस वक्त उनसे नहीं मिला चाहती। तुम सोचती होगी—इसको बड़ा भारी घमण्ड है,—ठीक है, घमण्ड भी है—क्योंकि हर-एक शख्स अपने कार्य्य के लिए—अपने लिए,—अपने दिल के लिए घमण्ड कर सकता है। उसको इसके अलावे—कई एक बातों में घमण्ड करने का अख्तियार भी है। खैर-उन्हे कह दो कि—तीसरे पहर-वे किसी समय आजायँ, मैं मिलूँगी अवश्य ही मिलूँगी, मिले वर्ना हर्गिज़ भी न रहूँगी। मुझे यहाँ सब से बढ़कर मिलना है तो उन्ही से मिलना है। उसी समय—उनसे-इस बेमौके पर आकर मिलने की इच्छा प्रकट किए हुए पर, न मिलने की क्षमा मागूंगी। उसकी ऐसी बातें सुन वह शिर झुकाकर चली गई। उसके जानेके बाद सावित्री ने तरणी से कहा—मैं किसी के साथ बेमौके न मिलती ही हूं, न मिलने हो जाती हूँ। मेरे में यही तो बचपन से ही एक बुरी आदत लगी हुई है,-खैर, अब तुम जावो,—मैं खाना खाकर कुछ देर तक अपने को निद्रा की बेफिकरी में डाला चाहती हूं। तरणी चली गई। उसके जानेके बाद सावित्री ने टहलना बन्द कर दिया और एक मेज के पास आकर एक कोचपर अपने को डाल दिया। उसने महाराज और महारानी की बातें सुन, जो कुछ भी करना था-उसी समय अपने दिल में निश्चय कर लिया था। इसलिए—वह जो कुछ भी कर रही थी, वह उसी सोचे हुए ढङ्गपर चल रही थी। आध घण्टे के बाद कई एक लौंडियोंके खाना उठवाकर तरणी आई। लौंडियों ने खाना मेज़पर रख दिया। सावित्री ने हाथ धोकर धीरे-धीरे

खाना खाया। उसके दिलमें तो बड़ा भारी सदमा गुजर रहा था, मगर बाहर वह जाहर होने नहीं देती थी। खाना खानेके बाद हाथ मुह धोकर सावित्री पलंग पर जा लेटी। तरणी और मामा पैर दबाने लगी।

सावित्री के दिलमें तरह तरह की चिन्तायें भरी हुई थी। उसको इस समय नींद काहेको आती। वह पड़ी २ अपनी बीती हुई घटनाओं के ख्याल में डूब, सोचने लगी—मैं भी कैसी अभागिनी हूं। विलासपुर में पिताजी की ज्यादती से मुझे घर छोड़ना पड़ा। मेरे पीछे मुझे सताने वाले लगे। बड़ी-बड़ी मुश्किल से अपने प्यारे का दर्शन मिला। वहां भी दुश्मन ने मुझे जबर्दस्ती अपने चंगुल में फंसाने के लिए बाँकी न छोड़ा। मगर वाहरे वीरता, प्राणनाथ ने उन सबोंका बातकी बात में नीचा दिखा कर मुझे बचाया। अहा, वह समय भी कैसा था, वह दिन भी कैसा था, वह रात भी कैसी थी, वह भाव भी कैसा था, वह हँसना बोलना भी कैसाथा। मैं समस्त संसार को भूली हुई अपने प्यारे का काम करती थी। मेरी आँखें उनको देखकर किसी तरह भी तृप्त नहीं होती थी। उनके पैर दबाने में, उनको पंखा झलने में मुझे कितना आनन्द आता था। परन्तु वह क्षणिक सुख, दो तीन घण्टे के भीतर ही बिजली की तरह चमक कर गायब होगया। उस दिन से,—हाय—उस दिन से आजतक फिर जिस वियोगकी तपाई में पड़ी हूँ, कभी शीतल होने का नाम भी नहीं मिला। मैं तिलस्म में थी, तो प्यारे भी तिलस्म ही में थे। मुझे आशा थी की किसी न किसी दिन वे तिलस्म तोड़ेंगे ही, तिलस्म टूटने के बाद जरूर मिलूंगी। मुझे उसने भी भरोसा दिया था, मगर हां, वह भी उनको पूरी तरह चाहती थी। इस

से क्या होता। मैं खुशी से उसको उनके पैर में डाल देती। मुझे इस बात से कभी ईर्ष्या आई ही नहीं थी। तकलीफ तो इस समय भी कुछ नहीं है मगर यहां—मेरे हृदय के अन्दर सैकड़ों बीछू एक साथ मिल कर डंक मार रहे हैं, मुझे उसके बर्दास्त करने में बड़ी तकलीफ मालूम हो रही है (भामा की तरफ़ देखकर प्रगट) मुझे एक ग्लास ठण्डा पानी तो पिलावो। (पानी के आने पर पीने के बाद करवट बदलकर मनही मन) तपे हुए बालू पर पानी की बूँदें छिड़के जाने की तरह मेरे कलेजे पर भी यह पानी वैसा ही हो रहा है। यह सब-कुछ भी नहीं है, यहां उन दोनों की बातें सुन मेरे हृदय में आग धधक उठी। यह आग—अब-जब तक मैं यहां से अपने को बचाए हुए निकल न जाऊँगी, कभी बुझने का नहीं है। बुझेगी कैसे—ये सब मेरे पीछे पड़े हुए, मुझे ज़बर्दस्ती नरक कुण्ड में ढकेला चाहते हैं। मगर मैं भी—ऐसी वैसी औरत नहीं हूं, मैंने भी बहुत कुछ मुसीबत देखा, मैं भी आसानी से मिलने वाली नहीं हूं। मैं भी—अगर इन्होंने कुछ भी पैर फैलाना चाहा तो दिखा दूंगी की क्या कर सकती हूं। अब रह गया-मुझे यहां से निकल चलना। कैसे निकलूं-गी—किस तरह निकलूंगी! मैं जहांतक अनुमान करती हूं इस समय से इस कमरे के बाहर भी-लौंडियों का सख्त पह-रा पड़ गया होगा। आने जाने वालों में भी-बहुतों की गिन्ती कम कर दी गई होगी, तब फिर मैं कैसे निकल सकती हूं! मेरा यह महल देखा भी तो नहीं है। मैंने तिलस्मही में सुना था, माहामाया मेरी खोजमें है, वह मुझे उन्हे देकर उनका ज़रा-सा प्रेम चाहती है। अगर यहां से निकलकर उसके पास भी पहुंच पाती तो बड़ा ही अच्छा होता। अब मैं क्या करूँ? मैंने

धोका तो नहीं दिया परन्तु—करुणा के दिल में जरूर ही कुछ बुरा ख्याल पैदा हुवा होगा। वह सोचती होगी—सन्ध्या के समय अकेले बाग़ में निकल कर कहीं चलता नदी होगी। मगर नहीं—वह ऐसा कभी न सोचती होगी। वह मेरे स्वभावको कई दिनों तक साथ रहने से—अच्छी तरह जानती है। वह मुझे न देख—घबड़ाई होगी। उसको—किसी तिलस्म में फँस जाने का सोच हुवा होगा। उसने अवश्य मेरी खोज के लिए आदमी लगाया होगा। जहांतक मैं समझती हूं—वह स्वयं भी इसी फेर में पड़ी हुई होगी। मैं उस बाग़ से कैसे ग़ायब हो गई। मुझे मालूम होता है, मैंने जिस गुलाब के फूलको तोड़कर सूंघा-तब से मुझे होश नहीं है। क्या वह सन्ध्या कल ही की थी। नहीं—ऐसा तो नहीं हो सकता। यहां से करक बड़ी दूर है। कम से कम तेज साँढनी की सवारी में भी आवेंगे तो दो दिन से कम क्या लगेगा। तब मैं क्या आज तीन रोज से बेहोश पड़ी हुई हूं। अवश्य पड़ी हुई होंगी। नहीं तो मुझे इसके बीच की कुछ खबर तो मालूम होती। अच्छा,—इससे क्या मतलब ? मेरा सतीत्व रत्न तो मेरे हाथ से कहीं गया नहीं है.—अगर मुझे उसके जाने का जरा भी शक मालूम होता तो,—इस प्राण को अब तक इस तनमें कभी न रहने देती। मुझे अपने सतीत्व का पूरा भरोसा है। मैं उसी से—यदि विधाता मेरे विपरीत न हुए तो—उसी के बलसे अपने को बचाती हुई निकल जाऊँगी। सबसे जरूरी कार्य्य, अब मुझे क्या करना है ? ठीक है—मैं उसे तो सोच चुकी हूँ:—उसी तरह करूँगी। उसी चाल को चलकर यहां से अँगूठा दिखाती हुई निकल भागूंगी। मनही-मन सावित्री इसी तरह की अनेक बातें सोचती रही। उसको

सोचते-सोचते कुछ झपकी भी आई। इतने में—कुमार बड़ी देरसे बाहर दरवाजे पर खड़े आसरा देख रहे हैं कहते हुए-तरणी की आवाज उसके कान में पड़ी। यह आवाज पड़ते-ही वह कुछ झुंझलाईसी होकर उठ बैठी।

पाँचवाँ बयान।

"मतलब निकालना है, मतलब से काम लेलो।
मतलब को देखकर ही, मतलब से दिलको देलो॥"

मेनका के साथ बदहवास सा होकर कुमार रणधीरसिंह चक्कर खाते हुए उस जमीन के टुकड़े पर बैठ गए। उनकी आँखें आप से आप बन्द होगईं। उनका होश कुछ देर के लिए उनसे दूर होगया। जब वह टुकड़ा चक्कर खाते-खाते रुक गया, तब वे कुछ संभल गए,—उन्होंने आँखें खोलकर देखा,—मेनका खड़ी मुसकुरा रही थी। वे भी जल्दीसे उठ खड़े हुए। उसने इनका हाथ पकड़ कर उस टुकड़े के नीचे उतारा। उन दोनों के उतरतेही वह टुकड़ा फिर चक्कर खाता हुवा ऊपर चला गया। कुमार ने अब निगाह उठा कर देखा,—उन्होंने अपने को एक लम्बे चौड़े, पहलेसे भी सामानों में बढ़कर सजेहुए कमरे के अन्दर पाया। उन्हों ने मेनका की तरफ देखकर कहा,—"क्या हमलोग ठिकाने पहुंच गए? अब तो दुबारा चक्कर खानेकी नौबत न आवेगी।

मेनका—(मुस्कुरा कर) क्या आप चक्करसे घबड़ा गए? मैं तो कभी भी ऐसो चक्कर से घबड़ाती नहीं हूं।

कुमार—मैं भी न घबड़ाता, मगर एकाएक तुम्हारे लिए-

टतेही मकान का हिलना और जमीन के टुकड़े का चक्कर खाते हुए नीचे उतरना देख मुझे बदहवासी सी आगई। मैंने अपने को बहुत कुछ संभालना चाहा मगर संभाल न सका। मुझे इसके लिए बड़ाही ताजुब होरहा है।

मेनका—नहीं प्राणनाथ! इसमें ताजुब होने का कोई काम नहीं है। यह तिलस्म है, तिलस्म में बड़े-बड़े बहादुरों की भी कुछ नहीं चलती। यहां-या तो तिलस्मी तरकीब से काम लिया जा सकता है या तो शैतानही कुछ काम कर सकता है।

कुमार—(मुसकुरा कर) तुम तो मेरी तरह बदहवास नहीं हुई, इसलिए तुम्हे तिलस्मी तरकीब कहूं या शैतान कहूं?

मेनका—(हँसकर) आप की समझ में जो आवे सो कह सकते हैं। परन्तु अभी नहीं,-नहा धोकर खापी लेने के बाद। ये दोनो आपस में इसी तरह की बातें कर रहे थे, इतने में नयना और सुरमा के साथ और सब लौंडियाँ भी आगईं। मेनका ने उन्हे देख, एक-एक को एक-एक आवश्यक कार्य्य करने का हुक्म दिया। वे सब कमरे भर में इत्र छिड़क हम्माम में चली गईं। ये दोनो भी जरूरी कृत्य से निपटने के लिए हम्माम में चले आए। घण्टे भरके बाद नहा धोकर रेशमी कपड़े पहन ये दोनों उसी कमरे में आए। वे सब लौंडियाँ भी उनके पीछे-पीछे चली आईं। मेनका ने आतेही-खाना लानेका हुक्म दिया। सुरमा दौड़ी हुई बाहर चली गई। मेनकाने कुमार का हाथ थामकर एक मेजके पासही, कोच पर लेजा-कर बैठाया। कुमार ने भी प्रेम से उसको खींच अपनी बगल में बैठाया। थोड़ी देर तक इधर-उधर की बात-चीत होती रही, तबतक खानाभी आगया। लौंडियां पंखा झलने लगी। दोनों आपस में बातचीत करते हुए खाना खाने लगे। मेनका-

ने कहा—आज मुझसी भाग्यवान् इस दुनियां में और कोई भी नहीं होगी। जिस अभिलाषा के पूरी होने की तपस्या कर रही थी वह आज पूरी होगई। कामना के मुताबिक मैंने अभीष्ठ वर भी पाया। अब मेरी केवल एक इच्छा बाँकी रह गई है?

कुमार—वह कौन सी इच्छा अब भी बाँकी रहगई है।

मेनका—आप के हाथों तिलस्म तोड़वाकर कुमारी सावित्री और छोटे कुमार के साथ अपने को मुँगेर में देखनेकी इच्छा भर बाकी रहगई है?

कुमार—(लम्बी साँस लेकर) अफसोस! बिचारी सावित्री ने कोमल कुसुमसी होकर मेरे पीछे बहुत कुछ तकलीफ उठायी मगर मुझ निर्दयी ने उसकी खोज खबर तक न ली। मेरे साथ न जाने ईश्वर क्या सलूक करेंगे?

मेनका,—माफ़कीजिएगा, मैंने उनका नाम लेकर बड़ी भारी गलती की मगर—कुमार—आप अफ़सोस न कीजिए। आपने जान-बूझकर लापरवाही तो नहीं की है। अगर ऐसा करते तो कुछ कहने की बात भी थी। यह तिलस्म का मामला ठहरा। यहाँ इसके मालिक तक भी—इसकी थाह न मिलने से—घबड़ा जाते हैं। देखिए—आपकी खोज महामाया क्या कुछ कम कर रही है? मगर आप अभी तक मिले नहीं हैं। कुमारी भाइसी तिलस्म में हैं। जिस दिन तिलस्म तोड़ने में हाथ लगावेंगे उसी दिन नहीं तो उसके दो एक दिनके भीतर ही आप उनको पा जायंगे। उनका यहां कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता। मैंने उनकी खोज में कई एक अपने आदमियों को लगा रक्खा है, देखिए—आजकल में वे सब क्या ख़बर लाते हैं।

कुमार—मैं देखही रहा हूं। न देखूं तो क्या करूँ मगर अफसोस है मेनका,—मेरे भीतर कई तरहकी आग धधक रही है। उसको मैं किसी तरह से बुझाना चाहता हूं मगर बुझती ही नहीं है।

मेनका,—मुझे सब कुछ मालूम है कुमार,—मगर इस समय उस आगको तो फकत सब्रही ठण्डी कर सकता है— और तो उपाय नहीं है। हां एक बाततो आपने सुनीही नहीं होगी। इन दिनों—संभलपुर से लेकर कटकके बीचमें आपके सैकड़ों आदमी आगए हैं। कुमारी किरणशशी। कुसुमलता, कादम्बिनी, सरला, माधवी, और जान्हवी भी कटक के पासही आगई हैं। उनके साथही साथ विक्रमसिंह और जसवन्तसिंह भी आगए हैं।

कुमार,—(प्रसन्न होकर) क्या किरणशशी और बहन कुसुमलता भी आगई हैं। क्या यह खबर सच्ची है?

मेनका,—जीहां, मेरे आदमी ने अपनी आंखों देख आकर मुझे बताया है।

कुमार,—तबतो ठीक होगा, मगर तुमने किस औरत का नाम जान्हवी कहकर बताया। वह कौन है, उनलोगों के साथ कैसे आई?

मेनका—क्या आप उसको नहीं जानते? वह वही साँवली औरत है,—जिसने कुमारी किरणशशी के साथ जाते हुए आपको मदद पहुँचाई थी।

कुमार—(खुश होकर) क्या वह वही है। उसीका नाम जान्हवी है। तबतो वह जरूर मुझसे मिलेगी? उस को मेरे साथ मिलसकने की ताकत है।

मेनका,—हां, उसमें भरपूर ताकत है। मैं उसको अच्छी

तरह से जानती हूं। मगर कुमार,-आप उसको क्या वैसीही सांवली औरत समझते हैं?

कुमार,—तो क्या उसने अपनी असली सूरतको रंगडाला है?

मेनका,—जीहां, उससे बढ़कर खूबसूरत और गोरी औरत तो शायदही और दूसरी होगी। उसने जिस तरह अपने नामको बदल डाला है उसी तरह कुछ दिनके लिए सूरत भी बदल डाली है।

कुमार,—उसका असली नाम क्या है और वह किसकी लड़की है?

मेनका—यह सब बातें आप इस समय न पूछकर उसी के सामने पूछते तो, एक रहस्य खुलनेके साथही साथ उसका परिचय पाकर बड़ाही आनन्द आता। मैं आपकी बातों को टालती नहीं सकती, मगर······

कुमार,—खैर-रहने दो, मैं इस बात में तुम्हे जोर नहीं देता, परन्तु इतनातो बता दो कि—वह क्षत्री की लड़की है या नहीं?

मेनका—(हंसकर) क्या आपकी तबीअत उसपर भी आगई है? ठीक है। बड़ी खुशी की बात है। वह आपही के लायक है। जैसे आप सब गुणों में सम्पन्न हैं, वैसी ही वह भी है। उसके नामसे और सब तो क्या इस तिलस्मकी महारानियां तक भी कांप उठती हैं। इन दिनों-इस तिलस्म को दहलाने वाला अद्भुतनाथ भी उसीकी मातहती में रहकर,-अपने पुराने मैलको धोया चाहता है। इतनी बात चीत होनेके बाद, दोनों ने खाना से हाथ खींचकर हाथ-मुंह धोया। इसके बाद वहाँ से उठकर दोनों एक मखमली गद्देपर आकर

बैठ गए। सुरमाने पान, इलायची दिया। मेनकाने कुमार से कहा—आप लेट जाइए, बैठे क्यों हैं? मैं अपने हाथ से और सेवा नहीं ता पैर तो दाबदूं।

कुमार,-मुझे इस समय लेटने की जराभी इच्छा नहीं है। हां, हमलोग कौनसी बातें करते-करते चुप हुए थे। अद्भुत नाथ की बातें ठीक है। उसको तुम कैसे जानती हो?

मेनका--उसको मैंही क्यों, इस जमीन का एक बच्चा-बच्चा तक भी जानता है। उसी की कारश्तानी से तो महा-माया और मायादेवी इनदिनों तिलस्मकी महारानी कहलाती हैं। क्या मैंने—यह सब बातें आपसे सबेरे नहीं कही थी?

कुमार—हां, मैंने सब सुनलिया है। जवानी के जोशमें नजाने आदमी लोग क्या क्या कर गुजरते हैं, कुछ ठीक नहीं, खैर—तुम एक काम कर सकती हो?

मेनका—सुनूतो सही, अगर नभी कर सकने का हो तो-भी कोशिश तो जरूर करूंगी।

कुमार—और कुछ नहीं, तुम मुझे जान्हवी से मिलादो।

मेनका—आपके कहने की कोई जरूरत ही नहीं है। मैं ज़रूर मिलाऊंगी,—मिलाकर उसीके सामने उसका रहस्य भी खोल दूंगी। मगर मुझे—ठीक जगह का पता नहीं लगा है, लगतेही मैं स्वयं उसको जाकर यहां ले आऊंगी।

कुमार;—अगर इतना कर सको तो, तुम्हारा एहसान मैं कभी भी इस जिन्दगी में भूल न सकूंगा।

मेनका—फ़क़त एहसानही न भूलकर रह जायंगे या और कुछभी अपने दिलसे मेरे लिए करेंगे?

कुमार,—"तुम बार-बार वही बातें मेरे मुंहसे क्यों कह-लवाती हो? क्या मैं ज़बान का कच्चा हूं?

मेनका—नहीं नहीं, ऐसी बात तो नहीं है, मगर जैसी बात आपने कही. वैसाही जवाब भी दिया गया। जरा सोचिए तो, यह दासी जब आपकी हो है तो इस दासी के एहसान न भूलने की बातें कैसी ?

कुमार,—तुम भूल करती हो। एहसान. अपने बदनही पर लगे हुए इस हाथका उस हाथ को भी मानना चाहिए। फिर भला कैसे-मैं तुम्हारा एहसान न मानूं।

मेनका—नहीं, मैं इस बातको हर्गिज नहीं मानूंगी। अगर आप मुझे एहसान-एहसान के झमेले में डालकर मेरा एहसान मानने लगें तो-बस हो चुका,—मैं एहसान करने वाली हुई, आप एहसान मन्द हुए। दोनोका पलड़ा कभी ऊपर नीचे न होवेगा।

कुमार,—(हंसकर) तुम भी कहाँ कहां की कैसी बातें किस ढङ्ग से ले आया करती हो। अच्छा—अब जाने दो, उसको तुम मेरा सामना करा दोगी तो—न तुम्हारा एहसानही होग न मैं एहसान किया हुवाही समझूंगा। दिलमें दोनों सोचेंगे—अनायासही यह बातें बिजली की तरह आसमान से झलक मार उठी। क्यों, अबतो राजी हो न ?

मेनका—(मुसकुराकर) जबसे आप मिले हैं तब से कब राज़ी न थी जो मैं अब राज़ी न होती ? मगर हां एक बात है—अगर आप राज़ी नकर सके तो—फिर कभी भी किसी बातसे राजी न होऊँगी।

कुमार—नजाने तुम किस बात से राजी होवेगी—मैं भला कैसे तुम्हे राज़ी कर सकने की बातें कह सकता हूं। हां—अगर तुम्हे हँसानाहोतो गुदगुदी लगाकर हंसा सकता हूं।

मेनका—क्या जबर्दश्ती हंसाने का नामही राजी होने-का है ?

कुमार—यह मैं कब कह रहा हूं? खैर—इन सब बातों को जाने दो। अब यह बतावो—विना तिलस्म तोड़े मैं इस तिलस्म से किसी तरह बाहर नहीं निकल सकता; परन्तु अभी तक तिलस्म तोड़ने की तरकीब मेरे हाथ नहीं आई है। ऐसी हालात में हमलोगों का कैसे काम बनेगा। तिसपर अभी तक महेन्द्रसिंह से भेंट भी नहीं भई है। उनके विना भी यह तिलस्म किसी तरह से टूट नहीं सकता।

मेनका,—ठीक है,—मगर मैंने एक छोटी सी किताब में देखा है। आप दोनो भाई एक साथ ही रहकर तिलस्म नहीं तोड़ सकेंगे। आप कटक से तोड़ते हुए घुसेंगे और छोटे कुमार सम्भलपुर से तोड़ते हुए इधर आवेंगे। बीच में औ-गल नामका एक बहुत बड़ा शहर है। वहीं पहुँच कर आप दोनो का तिलस्म तोड़नाभी खतम हो जाएगा—और दोनो भाई आपस में मिलेंगेभी। परमात्मा ने उसी तारतम्यका ठीककर आपको कटकके भीतर ला पहुंचाया, छोटे कुमारका सम्भलपुर में लेजाकर छोड़दिया। अब आपको तिलस्म की कुञ्जी जहां रक्खी हुई है, सबसे पहले उस छोटेसे तिलस्म को तोड़ना होगा।

कुमार,—अबतो कह रही हो, मगर वह अब कब है?

मेनका—यहतो मुझे मालूम नहीं है,-मगर ठहरिए—मैं आपको एक यन्त्र दिखाती हूं, उसमें शायद इसका समय ठीक-ठीक लिखा होगा। इतना कहकर वह उठ खड़ी हुई, और एक लोहे की सन्दूकड़ी में से—एक भुर्जपत्र पर लिखा

हुआ यन्त्र निकाल उनके हाथमें उसने दिया। कुमारने देखा-उस पर लिखा हुआ था--

विविध हैं विविधान भरे हुए।
विधिविना-चहुँ ओर धरे हुए॥
विविधमें न फंसो-अब सो चलो।
विधिकरो, यहला-सब खोजलो॥

ति	ञि	ट्ठा	खे	नु	थ	र	स	रा	सी	म्हा	स	ने	ल
स	र	हा	क्सा	ल	ठी	के	ब	दि	री	की	से	स्म	दि
ह	थ	न	गा	क	प	ड़ा	न	उ	हा	तु	में	न	ब
ल	है	वो	अ	ह	ही	हा	म	इ	म्हा	उ	तु	र	गा

इस यन्त्रको पढ़, पहले तो कुमारकी समझमें कुछ भी नहीं आया, परन्तु आध घण्टे तक बड़े गौर के साथ देखने के बाद उन्होंने प्रसन्न होकर मेनका की तरफ देखा। उसने उन्हे खुश होते देख कर पूछा—क्या आप इसके मतलब को समझ गए?

कुमार—हां, समझ गया! पहले तो मैं इसको देख एकाएक चकरासा गया था। मगर नहीं—यह कोई मुश्किल का यन्त्र नहीं है, इसको एक अदना आदमी भी अगर गौर करेतो समझ सकता है।

मेनका—मैंने तो कई बार इसको निकाल कर गौर किया था,—मगर इसके मतलब को समझ नहीं सकी थी।

कुमार—तुम्हे तिलस्म तोड़ना तो था नहीं, इसलिए भीतर तक घुसकर तुमने गौर न किया होगा। मुझे तो तिलस्म तोड़ना है, मैंने इसके तहतक पहुँचकर गौर किया। इसलिए मैं इसके मतलब को पागया।

मेनका—वेशक, यही बात है। अच्छा, तो इसमें क्या लिखा हुवा है?

कुमार—यह तुम शुरूके हरूफ से लेकर तेरहवें हरूफों को पढ़ती जावो, आपही समझ में आजायगा।

मेनका—(पढ़कर) ठीक है,—मगर इसमें किसी का नाम तो नहीं लिखा है।

कुमार—क्यों नहीं लिखा है,—देखो, इस यन्त्र के नीचे इस बारीक़ हुरूफ में क्या लिखाहुवा है?

मेनका—(देखकर) ओफ़, इसका तो मैंने आजतक कुछ ख्यालही नहीं किया था। इसमें तो आपका स्पष्ट नाम लिखा हुवा है। मगर तिलस्म के बनाने वाले भी बिचित्र ही ढङ्ग से लिखा करते हैं।

कुमार,—हां, अगर ऐसा न करें तो काम भी न चले। देखो—क्या ही अच्छे ढङ्ग से लिखा हुवा है।

सिंह से हो धीर रणमें-जब चलोगे तुम बढ़े।
फिर न दिखलाई पड़ेंगे सामने कोई खड़े॥

मेनका—हां, तो आप कब अट्ठारह बरसके होंगे।

कुमार—बस, इसी महीने के बादही।

मेनका—तबतो उसी दिन आपको तिलस्म तोड़ने में हाथ लगाना होगा?

कुमार—हां, यह यन्त्र तो ऐसाही हुक्म देता है। मगर यहतो बतावो,—यह मिला तुम्हे कहां से?

मेनका,—आज कोई साल भरके क़रीब होता है,—रातको मैं महारानी के महल से अकेली लौट रही थी। चारो ओर चांदना होरहाथा। समय पहर भरके अन्दाज़ आचुका था। मैं—कमलिनी के बाग़में पहुंची भी नहीं थी, इतने में किसी

को एक बड़ीसी गठड़ी उठाए हुए तेज़ी के साथ सामने की तरफ़ भागते हुए देखा। हमलोगों के पास हमेशाही तिलस्मी हथियार रहा करता है। मैंने उसी साहस से उसका पीछा किया। वह बहुतही घबड़ाया हुवा मालूम पड़ता था, इसलिए मेरा पीछा करतेही, वह उसगठडी को वहीं फेंक एक ओरको भाग गया। मैंने तब उस का पीछा नहीं किया। उस गठड़ी को उठाकर यहां ले आई। उसमें और तो कुछ नहीं था। कई एक कीमती साड़ी और यही भुजपत्र बंधा हुवा एक मामूली कपड़ा था। मैंने सोचा—वह कोई चोर होगा। इसलिए एकमलिनी की साडियां तो उसे सब हाल बताकर उसे वापस कर दिया, और यह अपने पास रख लिया।

कुमार—क्या तुमने कमलिनी से इस बातका ज़िक्र नहीं किया ?

मेनका—नहीं, मैंने कुछ और ही बात सोच कर इसका कोई ज़िक्र ही नहीं किया।

कुमार—ख़ैर जो कुछ किया अच्छा ही किया, मगर तुमने यहतो नहीं बताया कि कमलिनी कौन है ?

मेनका—वहभी महामाया की सखियों में से एक सखी है। मगर उसको वह हम सबोंसे ज़्यादा मानती हैं।

कुमार—इसी से तो यह यन्त्र उसके हाथ लगा मालूम होता है उसके पास इस विषय के कई एक लेख और भी होंगे। क्या तुम उससे मुझे मिला सकती हो ?

मेनका—(दुःखी होकर) तबतो आप महामाया के कब्जे में सीधे चले जायंगे। वह चाहे आपका कितनाही नोकसान क्यों न हो उसकी भलाई ही सोचेगी। अगर—संयोग-वश आप उसके पास पहुँच गए भी तो उसका कभी विश्वास

न कीजिएगा। मैं यह सब बातें डाह से नहीं कह रही हूँ-आपकी भलाई के ही ख्याल से कह रही हूँ। वह धोकेबाज तो हुई है-साथ ही जालिम है, खूंखार है, बदमाश है, बेहया है, निर्दयी है, खुदग़रज़ है। इसके जवाब में कुमार कुछ कहाही चाहते थे, इतने में—एक लौंडी ने आकर इशारे में उसको कुछ समझाया, जिसको समझ वह उसी दम उठ खड़ी हुई और कुमार का हाथ पकड़ कर कहा—बस, एक लहमे की भी देरी न कर मेरे साथ चले चलिए। मुझसे मिलने के लिए एक आफत की परकाला आ रही है। वह अगर आपको देख पावेगी तो गजब कर डालेगी। उसकी बातें सुन कुमार भी उठ खड़े हो चलने के लिए तैय्यार होगए।

छठवां बयान ।

"तुम पुराना-हाथ अपना, फिर उठाकर देखलो ।
देखलो—खिलता है गुल क्या, कुछ लुटाकर देखलो ॥"
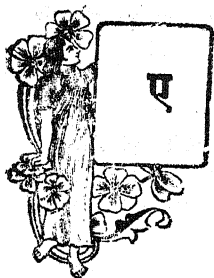
क आदमी को जञ्जीर के सहारे छतपर से उतरते हुए देख छोटी महारानी कुमुदिनी रजनी, और सजनी चौंक कर खड़ी हो, बड़ी घबड़ाहट से उसकी तरफ देखने लगी । वह आदमी धीरे-धीरे उतर कर जमीन पर खड़ा हुवा । खड़ा होतेही कुमुदिनी ने पहचान, खुशी जाहर करती हुई कुछ जोर से कहा,—ओफ, अद्भुतनाथ तुम हो ! मैं तो कोई गैरही समझ डरके मारे मरी जा रही-थी । कहो, अच्छे तो हो, आवो ? आज सालों के बाद तुम्हारा वही हँस-मुख चेहरा देखने का इत्तफाक हो रहा है । कहो मज़े में तो हो ?

अद्भुतनाथ—हां, महारानी, एक तरह पर इस समय मज़े-ही में हैं । मगर जब से आप लोगों का साथ छूटा है तबसे आफत, विपद्, दुःख, शोक और दरिद्रता के फेर में पड़कर यह अद्भुतनाथ अद्भुत तरह का बावला होरहा था । क्या करे, नसीब की बात किसी तरह से हुए बिना टलने की थी नहीं, इसलिए आपलोगों के चित्त पर से भी उतर गया ।

कुमुदिनी—(हाथ बढ़ाकर) तुम वहीं खड़े-खड़े यह

सब बीती बातें क्यों सुना रहे हो। आवो,—मेरे पासही यहां बैठ जावो। मैं सच्चे दिल से कहती हूँ, चाहे औरों ने अपने दिल से उतारा हो मगर आज दिन तक मैंने अपने दिलसे तुम्हे उतरने नहीं दिया है।

अद्भुत—(उसके पास आकर) ऐसी बात है! तबतो आप बैठ जाइए मैं भी बैठता हूं।

कुमुदिनी—(बैठकर) लो, मैं बैठगई, तुम भी बैठ जावो।

अद्भुत—(कुछ दूर हट कर बैठता हुवा) छोटी महारानी, आप ने अभी तक इस बन्दे को अपने दिल से उतारा नहीं है, सुनकर मुझे बेहद खुशी हो रही है। भला,—इस तिलस्म में और कहीं मेरा ठिकाना नहीं रहा तब भी आप के पास तो अभी तक कुछ-कुछ मेरा ठिकाना रहाही है।

कुमुदिनी—क्यों नहीं-बहुत कुछ है। तुम निर्दयी हो, तुमने अपनी निठुराई से मुझे छोड़े हुए न होते तो आजतक न जाने क्या हुवा होता। देखो—औरों की बातों को छोड़ो—मगर कभी मैंने भूलकर भी तुम्हे कुछ कहा है?

अद्भुत—नहीं, यहतो मेरे ख्याल में नहीं आता।

कुमुदिनी—तब फिर ,क्यों तुम मुझे छोड़कर चले गए थे?

अद्भुत—क्या करूँ महारानी—आपकी दोनों बहनों ने मेरा ही बनाया हुवा वंशिया को अपने प्राणों से भी बढ़कर समझ, मुझे काँटे की तरह देखना शुरू कर दिया, तब मैंने समझा कि—आपका दिल भी मुझ से फिर गया होगा। और एक दिन तो आप के साथ अकेले में उस हरामी के पिल्ले को बैठे हंसते-बोलते देख,-मुझसे रहा नहीं गया, इसलिए किसी से कहे सुने विनाही यहां से चल दिया।

कुमुदिनी—(शर्माकर) मैं उस समय लाचारी के साथ

बहीनों के हाथ की कठ-पुतली होकर काम करती थी। तुम सच जानो—मैंनेदिलसे तुम्हे छोड़कर उसे कभी नहीं चाहा। आज तुम्हे देखकर वही पुराना जोश उभड़ रहा है। (सजनी से) जावो, उस मनमोहनी रङ्गत को तो लेती आवो! (अद्भुतनाथ से) क्यों, यह प्यारा नाम तुम्हीने न उसका रक्खा है। जब कभी इसकी जरूरत पड़ती थी, तब तुम्ही याद आ जाते थे।

अद्भुत—महारानी, जिस तरह आपलोगों को मुझसे बिरक्ति होगई है,-उसी तरह उससे इनदिनों मेरी भी विरक्ति होगई है। मैं आपलोगों को लाचार हो जिस तरह भूलने पर आ गया, उसी तरह उसको भी भूलने के प्रयत्न पर तुल गया। अब जी चाहता भी नहीं, अगर चाहता भी है तो जीको रोककर उससे हटा लेता हूं। आज आप मुझे बड़ी दया के साथ—उसके भुलावे में फिर मत डालिए।

कुमुदिनी—नहीं, अद्भुतनाथ, मैं यह सब बातें नही सुना चाहती हूँ। तुम अगर उसको न लोगे तो मैं तुम्हारे सामने ही शिर फोड़ डालूंगी।

अद्भुत—यह आप मेरे साथ जबर्दस्ती कर रही हैं।

कुमु—तो क्या बरसों के बाद किसी प्रेमी से मिलने पर-भी ऐसी रूखाई अच्छी होती है? (सजनी से) हां, ले लाई! लावो, दोनो ग्लास मुझे दो, मैं अपने हाथ से—उसी तरह-जिस तरह पहले पिलाती थी पिलाऊंगी। (एक ग्लास को लेकर उसकी तरफ बढ़ाती हुई) लो, अब यह सब नखरे को कुछ देरके लिए ताक पर धर दो।

अद्भुत—महारानी, मैं विपत् का सताया हुवा हूं। मुझसे बढकर दिल का दुःखी इस समय कोई भी नहीं होगा। ऐसे

आदमी को यह सब चीजें कहांतक राहत दे सकती है, यह क्या आप से कुछ छिपा हुवा है ?

कुमु—मैं कुछ भी तुम्हारी बातें नहीं सुनूंगी । अगर मेरी जरा सी भी मुहब्बत है तो तुम्हे इस समय लेनाही होगा. लेकर मेरी तबीअत को खुश करनाही होगा ?

अद्भुत—अफसोस ! मैं यहां आकर तो एक औरही बला में फँस गया । परमात्मा, क्या मेरे ऊपर अब भी तुम्हारी दया नहीं है ? महारानी, आप सोचकर देखिए,—आज तो आप मुझे पिलाइएगा, कल से कौन मुझे पिलावेगा ?

कुमु—(जबर्दस्ती उसके हाथ में ग्लास देकर) मैं पिलाऊंगी, जब तक तुम जीते रहोगे, जबतक मैं जीती रहूंगी मैं पिलाऊंगी । आज तुम मेरा कहा मानकर इसे पी मेरी तबीअत खुश कर दोगे तो मैं दस लाख रुपैये की अशर्फी इसी समय तुम्हे दूंगी ।

अद्भुत—(ग्लास को लेता हुवा) नहीं महारानी, मुझे अशर्फियां नहीं चाहिए । अगर आप मुझे यह मनमोहनी पिलाया चाहती हो तो उस बङ्गले की ताली दीजिए, जिसमें अच्युतानन्द आकर बराबर रहा करता था ।

कुमुदिनी—(चौंककर) उस केसरीबंगले की ताली तुम्हे क्यों चाहिए ?

अद्भुत—अगर आप की कृपा होगी तो, मैं अबसे उसी में रहकर आपकी खिदमत किया करूंगा ।

कुमु—तुम यह सब बहाने की बातें क्यों करते हो ? भला—महाराज नरेन्द्रसिंह की तरफदारी छोड़ मेरे साथ क्यों रहोगे ?

अद्भुत-क्या आप छोटे कुमार महेन्द्रसिंह की तरफदारी नहीं करती हैं ?

कुमु—नहीं, मुझे तिलस्मनाशकों से क्या मतलब ?

अद्भुत—यह आप ऊपरी दिल से बातें कर रही हैं।

कुमु—यह तुमने कैसे जाना कि मैं ऊपरी दिल से बातें कर रही हूँ।

अद्भुत-मैं अच्छी तरह से जानता हूं। मुझे जानने में कुछ भी बाकी नहीं है। अभी-अभी आप अकेली में क्या कह रही थी। रजनी और सजनी के आने के बाद क्या क्या बातें हुई। इससे बढ़कर............

कुमु-(बात काट कर) बस बस मैं समझ गई। अद्भुत-नाथ, तुम मेरे बहुत हो पुराने दोस्त हो। दोस्त के हाथ से कभी बुराई नहीं हो सकती। तुम जो चाहो मैं देने के लिए तैय्यार हूं। तुम इसे पहले पी जावो तो मैं केसरी बंगले की ताली दूं।

अद्भुत—(प्रसन्न होकर) आप महारानी हैं, मैं आपका एक ताबेदार हूं। आप पहले इस ग्लास को पीजाइएतो मैं दूसरा ग्लास उठाकर पीऊँ ?

कुमु—क्या तुम्हे मेरे ऊपर कुछ शक मालूम पड़ता है ?

अद्भुत—शक करना तो अद्भुतनाथ जानताही नहीं है। न ऐसी ऐसी बातों में यह किसी से डरता ही है। आप उतने दिनों तक मेरी सेवा लेती रहीं, जानती नहीं हैं, यह किसी की बेहोशी से भी बेहोश होने वाला नहीं है।

कुमु—हाँ हाँ, मैं अच्छी तरह से जानती हूं। लो, यह दूसरा ग्लास लो, यह तुम्हारे हाथका ग्लास मैं पीती हूं। रजनी, वह मेरी सन्दूकड़ी तो उठाला। इतना कहकर उसने

अद्भुतनाथ के हाथ से ग्लास लेकर आपपीया और अपना ग्लास उसके होठों तक लेजाकर उसे पिलाया। तब तक रजनी भी सन्दूकड़ी उठाकर आपहुंची। कुमुदिनी ने उसे खोल, उसमें से एक लम्बी और खूबसूरत ताली निकलकर अद्भुतनाथ के हवाले करती हुई कहा—कहो, अब तो तुम्हारी तबीअत खुश हो गई। आजरात भर यहां रहकर दोचार ग्लास और लोगे न?

अद्भुत—जीहां, तबीअत तो खुश होगई,—मगर छूटी हुई भी आदत में क्या अब इससे ज्यादा ले सकूँगा।

कुमु—क्यों नहीं ले सकोगे, तुम्हारा नखरा इस अधेड़-पन में भी नौजवानों की तरह बनाहो हुवा है। (रजनी से) तुम खड़ी खड़ी क्या देखती हो, पिलाती जावो। आज बरसों के बाद बड़ाही मजा आया (सजनी से) तुम दो थाली में खानातो परोस कर लेआवो? रजनी ने उन दोनों को एक-एक ग्लास भरकर फिर मनमोहनी पिलाया। सजनी ने उसी दम अङ्गूर, सेव, बादाम के साथही साथ दोनों के सामने, भोजन की दो थाली लाकर रख दिया। अद्भुतनाथ को तो कुछ भी नहीं, मगर कुमुदिनी को नशा चढ़ आयाथा। उसने एक ग्लास अद्भुतनाथ को पिलाकर आप भी पीती हुई कहा—यह रंग अद्भुतनाथ, बड़े-बड़े बादशाही रङ्ग से भी बढ़कर है। अच्छा, यहतो बतावो, तुम सीधे रास्ते से न आकर इस छत-पर के इस विकट रास्ते से क्यों चले आए?

अद्भुत—मैं आपसे सच कहूं!?

कुमु—हां हां, जबकी मैं सचही पूछ रही हूँ तो तुम्हें भी सचही बताना होगा। बतावो—क्यों तुमने ऐसा किया?

अद्भुत—(दो एक कौर खाते-खाते) कुमार महेन्द्र सिंह

से मिलने के बाद मुझे यहीं रास्ता अच्छा मालूम पड़ा, इसलिए इधरही से चला आया ।

कुमु—(चौंक कर) क्या महेन्द्रसिंह से तुम्हारी भेंट हुई ?

अद्भुत—जी हाँ, मैं अभी-अभी उन्ही से मिलकर तो आरहा हूं ।

कुमु—तो, इस समय वे हैं कहां । क्या तुम उनके पास मुझे पहुँचा सकते हो ?

अद्भुत—क्यों नहीं, वे बिलकुलही आपके पास हैं । जब चाहे तब आप उनसे मिल सकती हैं ।

कुमु—(उठाया हुवा कौर वैसेही रखकर खुशी से) तो अद्भुतनाथ, तुम मुझे इसी समय उनके पास पहुंचादो । तुम इसके बदले में, चाहे तमाम दौलत मुझसे मांगो, मैं देने के लिए तैय्यार हूं ।

अद्भुत—मगर सोचिए तो महारानी, आप ऐसे समयमें, इस हालत को लिए हुए उन से कैसे मिल सकती हैं ?

कुमु—क्यों, मैं क्यों नहीं मिल सकती हूँ ? क्या वे इस जवानी में भी इस मनमोहनी को अपने होठों से नहीं लगाते ?

अद्भुत—राम राम. वे इसको लेना तो दूर किनार रहे, इसके नामसे भी सख्त नफ़रत रखते हैं । अगर आप इस हालत में जाइएगा तो वे फिर कभी आपसे न मिलेंगे ।

कुमु—तो तुमने पहलेही मुझसे ऐसा क्यों नहीं कहा ?

अद्भुत—आपने पूछा ही कब था, जो मैं आपको बताता । आपतो पहले उनकी तरफ़दारी करनेसे साफ़ इन्कार करती थीं ।

कुमु—अफ़सोस, तुमने आकर तो मेरे ज़ख्म पर और भी नमक छिड़क दिया । क्या करूं-कै कर डालूं । नहीं ,नहीं

यह रात भर चाहे जो कुछ भी किया जाय दूर नहीं हो सकती है। अद्भुतनाथ, प्यारे अद्भुतनाथ, तुम्हे मेरे सरकी क़सम, आज रात भर यहीं रहना होगा। कल सवेरे,-समझे, नहा धोकर मेरे साथ उनके पास चलना होगा और मेरी सिफ़ारिश जहां तक हो सके उनसे करदेना होगा।

अद्भुत—हाँ हाँ, मैं सिफ़ारिश तो कर दूँगा, मगर मेरी उम्मीद पर तो पानी फिर जायगा। इसके जवाब में कुमुदिनी कुछ कहा ही चाहती थी इतने में-बाहर से दरवाज़े का परदा हटाकर एक तातारी लौंडी ने कहा--हुजूर संभल जाइए, मझली महारानी मिलने के लिए नीचे से आरही हैं। यह सुन वे दोने जल्दी से उठकर-दरवाज़े की तरफ़ बढ़े भी नहीं थे, इतने में महारानी मायादेवी, कई एक अपनी सखियों को साथले कमरे के अन्दर आपहुंची। इस समय उसका गोरा-गोरा गालभी नशेसे गुलाबी रंगका होरहा था।

सातवाँ बयान।

"किया है ध्यान जिसका वह मिला है, देखलो जी से।
न हो तुम दूर अब, मन से, नजर से, प्रेम से, पीसे॥"
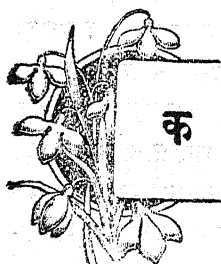
कमरे में धम्माके की आवाज आतेही, एकाएक फिर रोशनी हो आई। उजाले में प्रमीला के साथ कुमारी कनकलता ने देखा—चम्पा और चमेली को पकड़ने वाली अधेड़ औरत बेहोश पड़ी हुई है,—और वे दोनों लौंडियों का कहीं पता नहीं है। प्रमीला ने जल्दी से उस अधेड़ औरत के पास आकर उसको अपनेही हाथ एक लौंड़ो से मंगाकर लखलखा सुंघाया। वह उसी दम होश में आकर उठ बैठी। प्रमीलाने उससे पूछा—कहो सारंगा? तुम एकाएक कैसे बेहोश होगई, और वे दोनो बदमाश कैसे तुम्हारे हाथ से छूटकर ग़ायब होगए?

सारङ्गा—मुझे भी इस बात से बड़ाही ताज़ुब होरहा है। तमाम रोशनी बुझतेही नजाने किसने मेरे नाक को ज़ोर से दबाया, साथही मैं तिलमिला कर बेहोश होगई। फिरतो मुझे कुछ भी ख़बर नहीं है कि वे दोनो किस तरह भाग गए। क्या दरवाज़ा खुला हुवा है?

प्रमीला—नहीं, दरवाज़ा तो तुमने जैसा बन्द किया था उसी तरह अभीतक पड़ा हुवा है। मालूम होता है, उन्होंने ही तुम्हे बेहोश कर खिड़की से अपनेको बाहर निकाल डाला खैर जाने दो, अब वे सब साहस करके दुबारा यहां आही नहीं सकते ? मगर विचारी चम्पा और चमेली को उन बदमाशों ने क्या कर डाला, उन्हे खोजने के लिए आदमी भेजना होगा

सारङ्गा—वह मैं इसी दम भेजूंगी। मगर महारानी, अब आप माया देवी से ज़रा संभल कर रहिएगा। उसे, कुमारीका रहना अब छिपा नहीं रहेगा।

प्रमीला—हूं, यहतो तुम ठीक कहती हो, मगर कोई चिन्ता नहीं। मैंने भी मुकाबले पर तैयार होकर ही यह सब काम किया है। परन्तु यह तो बता—तुम्हे अच्युतानन्द के चेले का यहां आना कैसे मालूम हुवा ?

सारङ्गा—मैं खुद उनसे एक चेलेकी सूरत में मिली थी। वे तेज़ीके साथ कुमारी कुसुमलता, किरण शशी, कादम्बिनी वगैरह का पीछा करते हुए नील नगरकी तरफ़ जा रहे थे। उन्होंने मुझे देखतेही जल्दी जल्दी में अपने दोनो चेलों का यहां आना बताकर मुझेभी मदद के लिए जाने को कहा। मैं सुनतेही तेज़ी के साथ लपकती हुई इस समय यहां आ पहुंची।

प्रमीला—अगर तू मौके पर आ न पहुंच गई होती तो बड़ाही अनर्थ होगया होता। अब बता, मैं बहन कनकलता को यहीं रक्खूं या तिलस्मी गढके भीतर ले चलूं।

सारङ्गा—आज रात भर तो इन्हे अपने ही पास रहने दीजिए। मैं रात भर पहरा दिया करूंगी। कल सवेरे जैसी सलाह बैठेगी उसके मुताबिक किया जायगा।

प्रमीला—खैर तू जैसा मुनासिब समझ वैसा कर, मैं तेरी बातों को किसी तरह काट नहीं सकती और मुझे तेरी ऐयारीपर पूरा भरोसा भी है। मगर अफ़सोस, वे दोनो बदमाश हाथसे निकल ही गए! इतना कहकर वह कनकलता के पास आई और कहने लगी—देखा बहन, इन सब बदमाशों ने हमलोगों को कितना तङ्ग कर रक्खा है? तिसपर तुम्हारे लिए तो वे सब कुछ करने के लिए बाकी उठाएही नहीं रहते

कनक—मुझे तो अच्युतानन्द का नाम सुनते ही कंप कंपी पैदा हो जाती है।

प्रमीला—वह, है भीतो उसी तरहका ज़ालिम बदमाश।

कनक—तो क्या वह इतनेही में चुप रह जायगा? आगे हमलोगों को सताने का कोई कारवाई नहीं कर बैठेगा?

प्रमीला—क्यों नहीं, मगर घवड़ावो मत, अन्त में कभी अधर्म्म का जय होता नहीं। हमलोग धर्म्म पथ पर आरूढ हैं,—अतएव अपने मानके साथ जयका पल्ला पकड़कर ठिकाने पहुँच जांयगे।

कनक—मैं तो कहती हूँ बहन मुझे कुछ दिनों के लिए तुम सम्भलपुरही पहुँचा दो। मैं तुम्हारे खिलाफ कभी चलने को नहीं। वहां रहकर भी तुम्हारा काम करती रहूंगी तुम्हारे ऊपर भी माया देवी की वैसीही मुहबत बनी रहेगी। कुमार से भी शीघ्रही मिल सकोगी। अपने मनका सब कुछ होजायगा किसीको किसीके ऊपर उलहना देनेका मौक़ा न रहेगा।

प्रमीला-(सोचकर) एक तरह पर तुम्हारी राय भीमुझे ठीक जँचती है,—खैर आजकी रात किसी तरह से बीत जायतो कल सबेरे जो कुछ मुनासिब समझ में आवे किया जायगा।

इसके बाद दोनों ने मेवे वगैरह खाकर पानी पिया। तब तक सारङ्गा भी सब कुछ बन्दोबस्त कर के आगई। कमरेके बाहर दूना पहरा बैठ गया। महल के चारो तरफ नङ्गी तलवार लिए सिपाही लोग खड़े होगए। हर एक खिड़कियों के नीचे सङ्गीन चढाए—अफसर लोग मुस्तैद हुए। कमरे के अन्दर भी चार हबशिनोको ले सारंगा बैठ गई। प्रमीला और कनक लताके लिए दो पलंग पास ही पास बिछा दिया गया। दोनो ने कपड़ा बदला। दोनों एक साथही पलंग पर सोने चली आईं। दोदो लौंडिया उन दोनो के पैर दाबने लगीं। इसी तरह करते-धरते रात आधी के ऊपर चली गई। प्रमीलाको नींद आने लग गई थी, वह पलंग पर पड़तेही सोगई। कुमारी को इस समय तरह-तरह की चिन्ताओं ने घेर रक्खी थी। इस लिए उसकी आंखों में नींद नहीं आई थी। एकाएक उसको कमरे घरमें तेज गुलाब के रूहकी खुश्बू फैली हुई मालूम पड़ी। उसने जरासा सर उठाकर देखा। सारंगा हाथ में खञ्जर लिए टहल रही थी। उसने फिर तकीए में सिर रक्खा। इतने में उसको बड़े जोरकी नींद आगई। उसने अपने को बहुत कुछ रोकना चाहा, मगर रोक नहीं सकी। वह दीन दुनिये से बेखबर हो सोगई।

जब कुमारी कनकलताकी आंखे खुली तो उसने देखा, वह जिस कमरे में सोई हुई थी, वह यह कमरा नहीं है। था तो सब सामनों से सजा हुवा, मगर उतना लम्बा, चौड़ा और भड़कीला नहीं था। वह एक छोटी सी चांदी की चारपाई पर सोई हुई थी। उसके ताज्जुब का ठिकाना नहीं रहा। वह घबड़ाकर उठ बैठी। इतने में उसकी आंखे चारपाई के नीचे एक खूबसूरत कालीन पर सोई हुई सारंगा के ऊपर पड़ी।

उसके दिल में कुछ ढाढस बँधा। उसने पलंग पर से उतर कर उसको जगाया। उसने जागकर इधर—उधर देखने के बाद, ताज्जुब भरी सूरत बनाकर कहा,—ऐ! मैं कहाँ आगई! मुझे कौन यहां उठा ले आया? यह कमरा तो हमारे महल में का कोई भी मालूम नही पड़ता!

कनक—यही बात तो तुमसे पूछने के लिए—मैंने तुम्हे जगाया?

सारंगा—तो क्या आपको भी पता नहीं? हमलोगों के साथ किसने दगाबाजी खेली?

कनक—यह मैं कैसे बतासकती हूँ जरा खिड़की से झांक कर तो देखो,—हमलोग आ कहां गई हैं? सारंगा ने सभी खिड़कियों को खोल उनमें से झांक झांककर देखा,-मगर सिवाय खूबसूरत बागके और कुछ न देख, घबड़ाई हुईसी होकर दरवाजा खोलना चाहा, मगर वह किसी तरह से भी नहीं खुला। यह देख कुमारी ने उससे पूछा—क्या दरवाज़ा नहीं खुलता?

सारंगा—जी नहीं, मालूम होता है, दुश्मनों ने हमलोगों को धोके में लाकर यहां फंसाया है।

कनक—मगर कल रातको तो तुम, जब मैं सोने लगो थी—टहल—टहलकर पहरा देरहीं थी। फिर कैसे तुम धोके में आगई? बहन प्रमीला का क्या हाल हुवा? कहीं, वह भी हमीलोगों की तरह तो नही फस गई? यह मकान कहां का सा मालूम पड़ता है?

सारंगा—ठीक है, कल मैं पहरा देरही थी, मगर देते देते एकाएक कमरे भर में गुलाब की तेज़ खुश्बू फैल गई,—मैं ताज्जुब के साथ उसको सूंघकर उसका आनन्द लेने लगी।

इतने में मुझे झपकी आई। मेरे हाथसे खञ्जर छूटकर जमीन पर गिर पड़ा। मैं संभलते संभलते वेहोश होगई। जव मेरी आंख खुली तो मैंने आपको जगाते पाया। महारानी का क्या हाल हुवा होगा मैं कह नहीं सकती। यह मकान—मैं जहां तक सोचती हूं,—संम्भलपुर के तिलस्मी हिस्से ही का मालूम पड़ता है।

कनक—तो क्या हमलोग कई घण्टे के भीतर ही रामपुर से सम्भलपुर चली आईं?

सारंगा—तिलस्मी रास्ते में तो यह सब होना कोई ताज्जुब की बात नहीं है। मगर हमलोगों को वैसी हिफाजत की जगह से कौन इस तरह उठाकर यहां ले आया, यही एक ताज्जुब की बात है।

कनक—(गौर से उसकी सूरत देखकर) मालूम पड़ता है, तुम सारंगा नहीं हो, और ही कोई हो?

सारंगा—(ताज्जुब की सूरत बनाकर) ऐं? मैं सारंगा नहीं हूं, और ही कोई हूँ। यह आप किस तरह—किस बात को देखकर कह रहीं हैं?

कनक—तुम अब मुझे ज्यादे देरतक मत छकावो? देखो चाहे तुमने अपनी सूरत लाख रंगी हो मगर तुम्हारा चमकीला और काला बाल साफ़ही मुझे तुम्हारे अधेड़ न होने की बातें बता रहा है। बोलो-तुमने ऐयारी करके सब कुछ तो किया मगर वहां तक तुम्हारी अकल नहीं पहुंची। यह दिनका, तिसपर भी सुबह का सुहावना समय है। पहर दोपहर की चमकीली रोशनी से आंखे तिरमिरा नहीं गई है।

सारंगा—यह सब कुछ है—मगर क्या अधेड़ होते ही बाल पक जाते हैं? किसी किसी का तो मैंने सौबरस की

उमर तक भी बाल पके हुए नहीं देखे हैं। आपका अनुमान सोरहो आना ग़लत है। मैं और कोई भी नहीं, वही महारानी प्रमीलाकी पुरानी ऐयारा सारंगा हूँ।

कनक—अबतो और भी तुम सारंगा नहीं हो। अगर सारंगा होतो बतावो, जब तुम इधर चलने लगी थी तो मैंने तुम्हे क्या कहा था?

सारंगा—(संभलकर) कई दिनों की बातँ भला कैसे याद रह सकती है। तिसपर मुझे बड़ी जल्दी थी। सच पूछिए तो मैंने उस समय आपकी बातोंका ज़रा भी खयाल नहीं किया।

कनक—(मुसकुराकर) मेरी बातों का ज़राभी ख़याल नहीं किया! भला तुम किस काम के लिए हमलोगों से विदा होकर इस तरफ आई थी?

सारंगा—मैं-मैं तो कुमार की खोजमें आई थी।

कनक—अब इस मैं मैं को छोड़कर तुम पसीने में डूबा हुवा चेहरा, अपनी चदर से पोंछ डालो। अगर तुम्हे पोंछने में कुछ संकोच मालूम पड़े तो, कहो—मैं ही पोछ दूं।

सारंगा—धन्य हो कुमारी। मैं हारी आप जीती। मैंने आज आपकी बुद्धिमानी को माना। लीजिये—मैं आपही अपने चेहरे को पोंछ देती हूं (पोंछकर) कहिए—अब मैं वही सारंगा हूं या कोई दूसरी ही?

कनक—(गौर से देखकर) सारंगा की तुम्हारी सूरत तो तभी उतर चुकी थी,—मगर इस खूबसूरत-बहुत ही खूबसूरत, कमसीन चेहरे को तो मैंने कभी नहीं देखा था। सच सच बताओ तुम कौन हो? यह सब कार्रवाई तुम्हीने मेरे साथ की है या किसी दूसरे ने?

सारंगा—मैं क्यों ऐसी कार्रवाई करती और मुझे करने की क्या जरूरत थी, मगर हाँ मैं इतनी बातें बता सकती हूँ कि—मैं और कोई नहीं हूं; कुमारी कुसुमलता की सखी सरस्वती हूँ।

कनक—ऐं, तुम सरस्वती हो। (उसे गले लगाकर) बस. अब मेरी जान में जान आगई। मालूम होता है परमात्माने मेरी पुकार सुनली।

सरस्वती—मेरी मेहनत भी ठिकाने लग गई। मुझे उम्मीद न थी कि आपको इतनी जल्दी वहां से निकाल बाहर करूंगी।

कनक—मुझे किसने, किस तरह से यहां लाया कहकर पूछने की तो कोई जरूरत नहीं रह गई। अव सिर्फ यह पूछना है कि-यह कौनसी जगह है। और तुम अकेली हो या तुम्हारे साथ और कोई भी है।

सरस्वती—यह जगह सम्भलपुर है और यह मकान छोटी महारानी कुमुदिनी की सखी श्यामा का है। मैंने आपको उसी की मदद से इस तरह छुड़ाया है।

कनक—बस बस, समझ गई। मैं श्यामा को अच्छी तरह से जानती हूं। वह इस समय कहां है?

सरस्वती—मैं उसको बुला देती हूँ, आप मिल लीजिए। (तालीपीटकर) देखिए,—अब वह आती ही होगी। उसकी बातें ख़तम होते-होते दरवाज़ा जोर से खुला और एक पन्द्रह सोलह बरसकी निहायतही हसीन, कमसीन औरतने हंसते हुए कमरे के अन्दर पैर रक्खा। उसको इस तरह से आती देखतेही झपटकर कुमारी ने उसका हाथ पकड़, कहा वाह, सखी! श्यामा! तुमने तो आज मुझे अच्छा छकाया!

श्यामा—(हंसकर) मैंने छकाया था सारगां बनकर सरस्वती ने ?

कनक—वह भी तो तुम्हारी ही सलाहसे। तुम अगर न कहतीं तो काहेको वह अब तक इस तरह भूलावे में डाले रहती। अगर मैं पकड़ न पाती तो नजाने कबतक यह इसी हालत में रक्खे रहती। और जो कुछ भी किया,—मुझे वहां से तो निकाल लाई। अब मेरी उम्मीद कुछ दूसरी ही खुशी के साथ मिली हुई मुझे बहु कुछत भरोसा देरहो है।

श्यामा—ठीक है, मैं सब कुछ समझती हूं। मगर यहतो बतावो तुम्हे वहां जबतक रहीं तब तक कुछ तकलीफ़ तो नहीं हुई ?

कनक—नहीं, प्रमोलाने मुझे अपने से बढ़कर आराम दे रक्खा था। उसने कभी भी मुझे किसी बात में तकलीफ़ होने नहीं दी।

श्यामा—हां, वह रांड वैसा नकरेगी तो कौन करेगा। उसको तो तुम्हे खुश करके कुमार की मुहब्बत हासिल करना था।

कनक—वह तो बड़ी ही सुशील मालूम पड़ती थी।

श्यामा—अजी रामराम भजो। तुम्हे क्या मालूम ? तुम्हारे सामने उसने अपनी बनावटी सुशीलता जाहर की, नहीं तो मायादेवी की जान पहचान और दोस्तियाने में अम्बालिका, भुवनेश्वरी, राजेश्वरी, जेबुन्निसा और हुस्न बानू से भी बढ़कर वह बदमाश है। उनलोगों को दो ख़सम चाहिए तो उसको चार-चार ख़सम चाहिए ?

कनक—(हंसकर) तुम तो मालूम पड़ता है, उससे

निहायत ही रञ्ज हो। क्या उसने तुम्हारा कुछ बिगाड़ा है ?

श्यामा—बिगाड़ा नहीं है,-न कुछ बिगाड़ही सकती हैं मगर मौका पड़े तो वह बिगाड़ने में भी चूकती नहीं है। मैं तो उससे कभी बोलना भी पसन्द नहीं करती हूं। उसी ने तो मझली महारानी को इस ऐयाशी की नदी में तह तक डुबो दिया है। उसी की बदौलत तो वह इन दिनों रामपुर की महारानी कहलाती है।

कनक—खैर, इन सब बातों को जाने दो। अब बतावो, मुझे तुम यहीं रक्खी रहोगी या मझली महारानी के पास पहुंचा दोगी।

श्यामा—कहीं भी नहीं। मैं तुम्हे आज एक दूसरी ही जगह ले चलती हूँ। तुम भी क्या कहोगी कि श्यामाने कुछ किया।

कनक—क्या तुमने मुझे छोटी महारानी के कहने से छुड़ाया है ?

श्यामा—नहीं, उन्हे तो कुमार की फिक्र से कब फुरसत है जो यह सब बातें कहती। मैंने अपनी खुशी से—सरस्वती के साथ मिलकर तुम्हे छुड़ाया है। अतएव-इस बात के लिए अगर तुम मेरे साथ नाराज़ होतो मैं तुम्हारा पैर पड़कर तुम से माफ़ी चाहती हूं !

कनक—(हंसकर) यह नखरा ! मालूम होता है तुमने यह सब करना किसी उस्ताद से सीखा है।

सरस्वती—(हंसकर) जीहां, इन्होंने एक खूब सूरत और लायक़ सख्सके ऊपर आशक हो कर यह सब बातें सीखी है।

श्यामा—बस सखी? तुम भी अब मुझे उड़ाने चलीं!

सरस्वती—मैंने उड़ाया या तुम खुद उड़ रही है?

कनक—(हंसकर) क्या तुम दोनो आपस में झगड़ा कर के मुझे फैसला करने पर मज़बूर करोगी?

सरस्वती—आपको तो नहीं मगर एक दूसरे ही को तकलीफ़ दूंगी?

कनक—किसको तकलीफ़ दोगी?

श्यामा—तुम्हारे दिलवर, तुम्हारे हृदय धन, तुम्हारे प्राण, तुम्हारे प्रीतम, तुम्हारे जीवन, तुम्हारे सर्वश्व, तुम्हारे प्रियवर कुमार को।

सरस्वती—या तुम्हारे नजरके तारे महेन्द्रसिंह को?

कनक—(लजाकर) मगर-इस समय वे हैं कहां, जो तुम उन्हे तकलीफ़ दोगी?

श्यामा—मैं तुम्हे, नज़र भरकर दिखा दूंगी तो तुम मानोगी। इतना कहकर उसने—इस तरफ़ की दीवार पर गड़ी हुई एक खूंटी को दबाया। साथही उसमें एक हाथ भरका लम्बा चौड़ा मोखा निकल आया। उस मोखे के बीचो बीच बालिस्त भर मोटा एक शीशा जड़ा हुवाथा। श्यामाने उसमें कुछ देर देखने के बाद कनकलता को भी उसी तरह देखने के लिए कहा। उसने उसमें झांककर देखा—उस तरफ एक बहुतही बड़ा सजा सजाया कमरा दिखलाई पड़ा। उसके बीचो बीच एक मखमली कौच पर कुमार महेन्द्रसिंह बैठे हुए दिखलाई पड़े। उनके बग़लही में तरंगिणी खड़ी हो उन्हे पंखा झलती हुई दिखलाई पड़ी। कनकलता से और कुमार महेन्द्र सिंहसे अभीतक साक्षी तू नहीं हुई थी, तौभी वह अपने हृदय के धनको उनकी तस्वीरही देखकर अच्छी तरह से

पहचानती थी। तरंगिणी को तो वह मजे में जानती ही थी अपने प्यारे को इस तरह अपनी आंखों के सामने प्रत्यक्ष रूपमें बैठे हुए देख—वह मुहब्बत से अपने को संभाल न सकी, खुशी के मारे हाय प्राण नाथ कहकर खड़ी रह न सकने की वजह से तुरन्त ही बैठ गई। उसको उस समय अपने पराए का कुछ भी ज्ञान नहीं रहा।
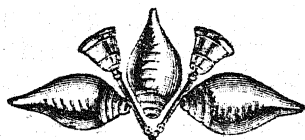
आठवां बयान

"फंस रहे हो तुम ज़रासी देख रङ्गत इस घड़ी।
अन्त में देगी लगाकर आंशुओं की यह झड़ी॥"
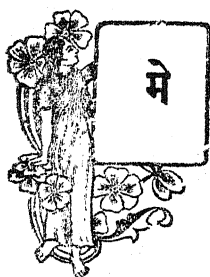
मेनका ने बड़ी फूर्तिके साथ कुमार रणधीर सिंहका हाथ पकड़,—एक बड़ीसी अलमारी को खोल,—उसमें से लेजाकर एक दूसरे ही कमरे में पहुँचाया। यह कमरा उस कमरे से भी सजा हुवा उसी के मुक़ाबिले का था। वहां पहुंचतेही उसने कुमारको एक कोच पर बैठा कर कहा—वह औरत मेरी थाह लेने के लिए महारानी की तरफ़ से आई हुई है। मै उससे मिलकर आध घण्टे के भीतर ही लौट आती हूं। आप को तकलीफ़ तो बहुत ही हुई, मगर किसी तरह से भी घबड़ाएगा नहीं? इतना कहकर वह जवाब का आसरा देखे बिनाही तेज़ी के साथ निकल कर जिस रास्ते से आई थी उसी रास्ते से चली गई। उसके जानेके बाद कुमार आपही आप सोचने लगे,—इस महामायाने भी एक से-एक बढ़कर खूबसूरत और कमसीन सखियां रक्खी हैं। उसके शौक़ का भी कुछ ठिकाना है? मगर यह सब उसे दिल से नहीं चाहती। यह सब अपने ही मतलब के पीछे दिवानी होकर फिरा करती हैं। मैं भी यहां आकर इनलोगों का एक अजब खिलौना बन गया हूँ।

एक इस तरफ़ खींचती है तो दूसरी उसतरफ़ खींचती है। जिसकी नज़रके सामने मैं पड़ा—उसने मुझे अपनाने का प्रयत्न किया। इसी झमेले में आज हफ्तों बीत गए-मुझे छुटकारेकी सूरत तक दिखलाई नहीं पडती है। खैर मुझे-सिवाय सावित्री और किरण शशी की जुदाई के और किसी बातकी तकलोफ नहीं है, न यहा मुझे किसी तरहकी कोई तकलीफ ही देना चाहते हैं। मेरा समय भी इन दिनों क्या ही अजब तरहसे बीत रहा है। एक मर्तबा बहूरानी को देख पाते तो बड़ाही मज़ा आता। सुनते हैं-वह भी मेरे ऊपर आशक़ है,—आशकही नहीं मेरे लिए पूरी पागल होरही है। क्याही अनोखा मामला है? मैंतो परिश्तान में गोया इन्द्र बनके आगया हूं। अगर अपने यहां होता, और सब तरह की फ़िक्रों से दूर होता तो यह मज़ा—स्वर्गीय मज़ा से बढ़ कर था। परन्तु सभी बात तो एक साथ मिलती नहीं है। देखे-कहां तक इस तरह का रङ्ग मेरे ऊपर चढ़ा रहेगा। मैं भी अब जिस तरह से ये लोग खुश होती हैं, उसी तरह करता जाऊंगा। मुझे इन सबोंको नाराज करने से सिवाय नुकसान के क्या फायदा। ये लोग खुश रहेंगी तो एक न एक रोज़ मेरा काम बनही जाएगा। मैं इस समय अपना मतलब देखूं या इन लोगों को दुतकार बताऊं। नहीं,-वेचारी लोग मेरे ऊपर जान दिए बैठी हैं-और सबके सब खूबसूरत भी हैं, बदसूरत भी नहीं हैं। साथ ही कुआंरी भी मालूम पड़ती हैं। ऐसी हालत में—क्यों न मैं,-सुख के साथही साथ अपना रास्ता भी बनालू। अब तिलस्म में हाथ लगाने का समय बहुत ही क़रीब आगया है। मैं समझता हूं-पांच चार महीने से ज्यादा न होगा। बड़े बड़े दैवज्ञवर्य्य की लिखी हुई बातें

कभी झूठ नहीं उतरती। उस समय मुझे जरूर ही तिलस्म तोड़ने में हाथ लगाना होगा। फिरतो—जितनों ने मेरे साथ मुहब्बत किया है-उन सबों को लेकर मैं मुंगेर चला जाऊंगा। तब तक कुमारी सावित्री और किरण शशी भी मिल जायगी। आह ? वह समय कैसा होगा, जब मैं अपनी दोनों प्रियतमा को, दोनों बगल में रखकर-हंसी खुशी की बातें करूंगा, और ये सब लौंडी की तरह खड़ी हो मेरी सेवा किया करेगी।

यही सब बातें (सोचते सोचते) घण्टे भरके क़रीब होगया, परन्तु मेनका नहीं आई। अकेले बैठे बैठे कुमार को झपकी सी आने लगी। बे उसी-कोंचपर उठंगकर सोगए। अभी उन्हे सोए, दो मिनट भी न बीता होगा—किसी ने उनका हाथ पकड़कर जगाया। बे चौंककर जाग उठे। जागते ही उन्होंने देखा-एक नाटेकद का नक़ाबपोश आदमी उनके सामने खड़ा हो-उन्हे जल्दी से उठ भागने का इशारा कर रहा है। कुमार ने झुँझलाकर उससे पूछा-तुम कौनहो, मुझे क्यों यहां से भाग जाने का इशारा कर रहे हो।

वह—मैने भाग जानेका तो नहीं, उठ खड़े होनेका इशारा किया था। आप क्यों झुँझला उठे, अगर आपको इसी तरह से झुझलाना हो तो उठने के बजाय सो जाइए! उस नकाब पोशके क़दको देखते ही कुमारने उसको मेनका ही है समझ लिया था, मगर-उन्होने उसके अलावे और कोई औरत होगी यह नहीं समझा था। उन्होंने ख़याल किया था यह मुझसे इस तरह दिल्लगी करने के लिए आई होगी। जब उसकी उससे भी मीठी, और सुरीली आवाज उनके कान में पड़ी तो, वे कुछ कुछ ताज्जुब में आकर उसकी ओर देखने लगे।

उसने कहा—हाँ, साहब, अगर आपको मेरे जगानेसे,-मेरे इस तरह पर आनेसे कुछ नाराजी हो तो-जिस तरह आप सोए हुए थे उसी तरह सोजाइए,-मैं आपसे माफी माँगता हुवा अपना रास्ता लेता हूं

कुमार—रास्ता लेता हूँ या लेती हूँ।

वह—दोनों में से जैसा सुबीधा समझती हूँ, उसी तरह से बोला करती हूं। न मैं इसके ही पावन्द हूँ. न उसके ही पाबन्द हूँ।

कुमार—वाह! तब तो तुम अजब तरह की मसाला हो। खैर,-तुम नकाब उतारकर तो अपना चेहरा दिखा दो।

वह—नहीं, मुझे नक़ाब उतारते शरम मालूम पड़ती है। आप इस बात में ज़ोर मत दाजिए—नहीं तो मेरा चेहरा ही बिगड़ जाएगा।

कुमार—(हंसकर) मैं तुम्हे ज़ोर नही दूँगा-तुम अपनी खुशी से नक़ाब उतारकर दिखादो। बिना सूरत देखे बातें करना अच्छा मालूम नहीं पड़ता।

वह—मुझे तो आपकी सूरत दिखलाई पड़ती है, मुझे तो अच्छा मालूम पड़ता है।

कुमार—अकेले तुम्ही को अच्छा मालूम पड़ने से क्या होता है।

वह—तो क्या मैंने दुनिया भरके अच्छेका ठेका लिया है?

कुमार—खैर-अकेले तुम्हीं को जो अच्छा मालूम पड़े सो करो, मगर कम से कम यह तो बता दो कि-तुम किस ग़रज़ से यहां आई हो और तुम्हारा क्या नाम है।

वह—मैं अपनी ग़रज़ से आई हूं और मेरा नाम गबड्डू है।

कुमार—वाह, क्याही अच्छा नाम है। मगर तुमने अपनी गरज़ से मेरे आराम में क्यों खलल पहुंचाया ?

गबड़ू—मैं ही क्यों, अपनी गरज से सबकोई दूसरे के आराम में खलल पहुँचाते हैं। क्या आप अपनी गरज से तिलस्म तोड़ने के लिए नहीं आए है ?

कुमार—आए हैं तो इस में किसको बाधा पहुंच सकती है।

गबड़ू—वाह साहब, आपका ऐसा भोला भाला भी मैंने किसी को नहीं देखा था। क्या तिलस्म तोड़ने से किसी को बाधा नहीं पहुंच सकती है।

कुमार—तो बतावो, किस किस को पहुँचती है।

गबड़ू—सब से पहले तो मुझे पहुंचती है, उसके बाद बहूरानी को उसके बाद दारोगा को, उसके बाद यहां के रहने वालों को, उसके बाद तिलस्मके कल पुर्जों को उसके बाद तिलस्म के नामों को बाधा पहुँचती है।

कुमार—अगर ऐसा ख़याल किया जायतो कामही न चले।

गबड़ू—क्या बिना तिलस्म तोड़े आपका काम नहीं चल सकता ?

कुमार—चल क्यों नहीं सकता, मगर बुज़ुर्गों की बातों का रखना भी तो अपना मुख्य कर्त्तव्य है।

गबड़ू—बस, ऐसे कर्त्तव्यों को तो आप नमस्कार के पानी से धो डालिए। अगर आप धर्मकी, दयाकी, विवेककी राह पर चलना चाहते हों तो तिलस्म तोड़ने से बाज आइए !

कुमार—क्या तुम यही सब बातें समझाने के लिए इस तरह, इस बे मौके पर यहां आई थीं ?

गबडू—जी नहीं, मैं तो यहां सिर्फ़ अपनी ग़रज़ से आई थी।

कुमार--तो अब तुम्हारी ग़रज़ पूरी होगई होगी, अतएव क्यों नहीं चली जाती।

गबडू—मैं आपसे पूछकर थोड़ेही आई थी, जो आपके कहने से चली जाऊंगी।

कुमार—तो जो मनमें आवे सो करो, मैं अब तुम से बोला नहीं चाहता।

गबडू--एं एं? ऐसी नाराज़ी क्यों? क्या मैंने आप को काट खाया है?

कुमार—नहीं, काट क्यों खावोगी। मगर मेरी तबीअत अब किसी से बोलने को नहीं करती है।

गबडू-बोलने को नहीं करती है तो-सुनने को तो करती है

कुमार-नहीं, सुनने को भी नहीं करती है।

गबडू--तो क्या चेहरा देखने की करती है?

कुमार—नहीं, उधर से भी तबीअत हट गई है।

गबडू--तो किस तरफ़ तबीअत लगी हुई है।

कुमार—किसी तरफ़ भी नहीं।

गबडू—किसी तरफ़ भी नहीं? बड़े आश्चर्य्य की बात है। आप आदमी हैं या क्या हैं?

कुमार—तुम्हारा सिर।

गबडू—(हंसकर) मेरा सिर न कहिए, दुनियांका सिर।

कुमार—खैर किसी का भी सिर हूँ भाई, तुम यहां से रवाना वाशद हो जावो? मैं अब मेनका को बुलाता हुं।

गबडू--मेनका को क्यों बुलाते हैं, क्या आपको डर मालूम पड़ रहा है?

कुमार—जी हां साहब, मुझे डर मालूम पड़ रहा है; आप जाइए भी तो:

गबडू—मैं अपनी गरज़ पूरी किए बिना कैसे जासकतीहूं;

कुमार—क्या तुम्हारी गरज़ अभी पूरी नहीं हुई है?

गबडू—जी नहीं, मगर थोड़ी ही देर में अब पूरी होती है।

कुमार—तुमतो अजब तरह की औरत मालूम पड़ती हो।

गबडू—थी तो मैं हाथ, पैर, नाक, मुह से सभी औरतों की तरह मगर इस वक्त इस नक़ाब ने एक अजब तरह कीबना रक्खा है?

कुमार—तब क्यों नहीं तुम नक़ाब को उतार डालती?

गबडू—मुझे उतारने का हुक्म नहीं है?

कुमार—किसका हुक्म नहीं है?

गबडू—आपकी मालिकन का।

कुमार—(बिगड़ कर) मेरी मालिकन का? मेरी मालिकन कौन है?

गबडू-जिसका ध्यान आप आठो पहर अपने दिल में बना ए रहते हैं। जिसके विना आपका खाना-पीना एक दम फिर फिरा हो रहा है?

कुमार—मैं किसका ध्यान करता हूं। मेरा खाना-पीना किसके विना फीका पड़ रहा है?

गबडू—यह आप अपने ही दिल से क्यों नहीं पूछते?

कुमार—मैंने पूछ कर ही तो तुम्हे बताया है?

गबडू—आप सरासर झूठ बोल रहे हैं?

कुमार—बस, ज़बान संभालकर बातें करो!

गबडू—(हंसकर) यहां क्या ज़बान भी संभालकर बातें करनी पड़ती है।

कुमार—नहीं तो क्या ज़बान को बेतहासा छोड़ कर बातें करोगी ?

गबडू—अच्छी बात है, मैं ज़बान को रोक-रोक कर बातें करूंगी। मगर सुनिए तो—अगर मैं बोलते-बोलते बेतहासा उड़ पडूं तो संभाल दीजिएगा ?

कुमार—मैं तुम्हारा यह सब फ़जूल का बक़बाद सुनना ही नहीं चाहता।

गबडू—परन्तु इन्दुमती के हुक्म से तो सुनना चाहते हैं।

कुमार—इन्दुमती कौन है, मैं उस के हुक्म से क्यों सुनने लगा॥

गबडू—अगर उसके हुक्म से सुनना नहीं चाहते हो तो, चन्द्रप्रभा के हुक्म से, यह भी आपको मानना मञ्जूर न होतो अलकनन्दा के हुक्म से,-यह भी न सुनना चाहेंतो लवङ्गलता के हुक्म से,-यह भी आपकी तबियत न करती हो तो मेनका के हुक्म से, यह भी आपके पसन्द नहो तो मधुरी के हुक्म से, यह भी आपको ना मञ्जूर हो तो किरणशशी के हुक्म से-अन्त में किसी पर भी राज़ी न होतो सावित्री के हुक्म से तो सुनेंगे ?

कुमार—अफसोस ! तुमने सावित्री का नाम लेकर क्यों मेरी बुझती हुई आग को धधका दिया। क्या यही करने के लिए तुम यहाँ आई थी ?

गबडू—जी नहीं, मैं तो मेरा काम करने के लिए यहाँ आई थी ?

कुमार—तो बोलो, तुम्हारा कौनसा काम है ?

गबडू—और कुछ नहीं, आज आपको कुमारी सावित्री के एकबार मिलने का न्यौता दिया है ?

कुमार—(उठकर) तुम झूठी हो; तुम मुझे भुलावे में डाला चाहती हो। अगर सच है तो बतावो वह कहां है?

गबड़—अगर आप इस तरह बिगड़ कर तेज़ी के साथ बोला करेंगे तो मेरी बोलती बन्द होजायगी। फिर मैं कुछ भी बता न सकूंगी। आप ख़ामोश होकर बैठ जाइए-मैं धीरे-धीरे आप को सब बता दूंगी।

कुमार—तुम पहले अपने चेहरे पर से नक़ाब उतार डालो!

गबड़—क्या ऐसा करने से आप मेरी बातों को सच मान जाइएगा?

कुमार—मानूं या न मानूं वह मेरे अख़्तियार की बात है। तुम नक़ाब तो उतार डालो,-नही तो मैं ज़बर्दश्ती पकड़ कर उतार डालता हूं?

गबड़—ज़बर्दस्ती? अरे बापरे बाप? ज़बरदस्ती के नाम से तो मेरा होश पैतरा होगया। लीजिए साहब, (नक़ाब को उलट कर) अब ज़बरदस्ती का नाम न लिजिए। मैं आप से दहल गई। कुमार ने देखा, वह एक सोलह सत्रह बरस की बेहद खूबसूरत औरत है। उसकी लम्बी लम्बी लजीली और मदभरी आंखें, बिजुली की तरह दिल को खींच रही है। उसके पतले -पतले लाल-लाल ओंठ, मन्दर मुस्कराहट से भरे हुए हैं। उन्होंने-वैसी खूबसूरत और दिल को लुभाने वाली औरत कभी न देखी थी। उसको देखतही वे कुछ क्षण के लिए सकते की हालत में पड़े रहे। उनकी ज़बान बन्द होगई। वे कुछ बोला चाहते थे, मगर बोल नहीं सके। उनकी ऐसी हालत देख, उसने मुसकुराकर कहा—कहिए साहब! आप जब तक नक़ाब न उलट दिया गया तब तक तो नक़ाब उलट ने के लिए बड़ा ही ज़ोर बांधते थे। अब नक़ाब उलटने पर आपकी

क्या हालत होगई ? इसी लिए तो मैं आपके बार-बार कहने पर भी नक़ाब नहीं उलटती थी ?

कुमार—सच बतावो, तुम कौन हो ?

गबडू—आप देखते नहीं, मैं औरत हूं ।

कुमार—यह तो मैं भी देख रहा हूं, मगर तुम कौन हो, तुम्हारा नाम क्या है ?

गबडू—यह सब सुनकर आप क्या कीजिएगा ?

कुमार—मैं कुछभी नकरूंगा, मगर-कभी-कभी तुम्हारा परिचय पाकर तुम्हारी यह मन मोहनी सूरत तो याद किया करूंगा ।

गबडू—आप मेरी ऐसी कितनों की याद किया करेंगे ?

कुमार—मगर-तुम्हारी तरह तो और सब नहीं हैं ।

गबडू—मुझमें और सबों से कौन सी विशेषता है ।

कुमार—खूब सूरती है, नज़ाकत है, मिठास है, मोहनी है, मज़ाक है, समझ है, चालाकी है. दया है, सजावट है, लुनाई है·········

गबडू—(बातकाटकर) रूलाई है, धोका है, दग़ा है—ख़ैर सब कुछ है । मगर आप मुझे न पहचानते तो बड़ा ही अच्छा होता ।

कुमार—क्यों क्यों, ऐसा तुम क्यों कह रही हो ?

गबडू—मैं बड़ी ही दुःखिनी हूं,-वियोगिनी हूँ, अभागिनी हूं, अतएव मुझे पहचान कर आपके दिल में कुछ सदमा गुज़रेगा ।

कुमार—तुम और दुःखिनी ? यह मुझसे बहाना कर रही हो । भला तुम्हारी ऐसी पिकबैनी भी वियोगनी और दुःखिनी हो सकती है ? आवो, मैं भी बैठता हूं, तुम भी इस कोचपर

निश्चिन्तिता के साथ बैठकर बातें करो। मेरी उत्कण्ठा तुम्हारा परिचय पानेके लिये जोरों से बढ़ रही है।

गबड्डू—आपतो उस समय मुझे घता होने की बातें बता रहे थे।

कुमार—उस समय तुम नकाब के परदे में भी तो छिपी थी। (उस के मुलायम हाथको पकड़कर) आवो, मेरा कहना मानकर बैठ जावो?

गबड्डू—राम राम? आपने मेरा हाथ पकड़कर क्यों मुझे अधर्म के गड्ढे में ढकेल दिया। अगर किसी ने देखा तो क्या कहेंगे?

कुमार—(उसका हाथ छोड़ कर) क्या तुम्हारी शादी हो गई है?

गबड्डू—हो तो नहीं गई है, मगर आजही कलमें होने वाली है।

कुमार—किस भाग्यवान् के साथ तुम्हारी शादी होने वाली है?

गबड्डू—भला मैं उनका नाम कैसे बता सकती हूं?

कुमार—खैर उसका नाम नहीं बता सकती हो तो उसके बाप-दादे का नाम तो बता सकती हो?

गबड्डू—क्यों नहीं, उनके बापका नाम नरेन्द्र सिंह है।

कुमार—(चौंककर) क्या तुम्हारी शादी मेरे भाई से होने वाली है?

गबड्डू—वाह साहब? आपतो मुझे अच्छी गाली देरहें है। क्या आप के पिता का नामही नरेन्द्रसिंह है, औरों का नाम नरेन्द्रसिंह नहीं है?

कुमार—क्यों नहीं, मगर,—

गबडू--अब इस मगर तगर को छोड़िए और कहिए की मैं कायल हुवा ?

कुमार—वहतो अभी से नहीं, जबसे तुम्हारी सूरत देखी है-तभी से कायल हुवा हूँ। मगर अफसोस! मुझे तुमने अपनी सूरत दिखा कर धोका दिया।

गबडू—ऐ, मैंने धोका दिया या आपने जबर्दश्ती करके आपही धोका उठाया। मैंतो हाथ जोड़ती रही, पैर पड़ती रही, नाकरगड़ती रही मगर सुनता कौन था ?

कुमार—खैर,-अब मेहरबानी करके तुम अपना नामतो बता जावो।

गबडू—क्या मुझे मेनका से कहकर इसका बदला लिया चाहते हैं ?

कुमार—नहीं नहीं, भला औरत के साथ भी मैं ऐसा कभी करूंगा ?

गबडू—तो सुनिए-मेरा नाम सुलोचना है। मैं महामाया की सखियों में से एक अदने दरजे की सखी हूँ।

कुमार--वाह, क्या ही मधुर नाम है। मैं भी-तुम्हारे नयनों को देखकर ऐसे ही कुछ नाम रहनेका ख्याल करता था। मगर-अब मुझे इन सबों से क्या मतलब ? तुम्हारी शादी तो दूसरी जगह होनेवाली हैन ?

सुलोचना—इससे, क्या किसी की सुन्दरता का बयान नहीं करेंगे ?

कुमार—करेंगे, एक बार नहीं सौ बार करेंगे। मगर...

सुलोचना—दिल से नहीं करेंगे। खैर न कीजिए, इसका मुझे दुख भी नहीं है। मगर सुनिएतो—यदि मैं उन नरेन्द्र सिंह के लड़के के साथ शादी न करके, इन नरेन्द्रसिंह के

बड़े लड़के के साथ शादी तै करूं तो क्या हो? आप तारीफ़ करेंगे?

कुमार—(हंसकर) तुम, इतनी मसख़री हो, मैंने यह ख्याल नहीं किया था। खैर-सावित्री ने मुझे कहां बुलाया है, यह मुझे बतावो?

सुलोचना—आपको मेरे ऊपर शकतो नहीं होगा?

कुमार—मैं अब यहां किसी के ऊपर भी शक नहीं करता? क्योंकि मैं देखता हूं—यहां कोई भी मेरे साथ दुश्मनी नहीं करते। तिसपर सावित्री के लिए—अगर आग में कूद पड़नेके लिए भी कहोगीतो कूद पड़ूंगा।

सुलोचना—तो मेरे साथ मैं जहां लेजाऊंगी बेधड़क चले चलिए।

कुमार—चलो, खुशी से मैं चलने के लिए तैयार हूं। इतना सुनतेही सुलोचना चलने के लिए तैय्यार होगई, इतनेमें बाहर से किसीने दरवाजे को ज़ोरसे खट-खटाया।

नौवां बयान।

"उतरे हुए हौ तो करो तुम काम काज कुछ।
देखो, भुलो न,-जानलें वे और राज कुछ॥"

एक निहायतही खूबरत और दिलको लुभाने वाला नौजवान लड़का हाथ में एक लम्बी सी लाठी लिए, सिर पर बड़ासा जयपुरी साफ़ा बांधे, तेज़ीके साथ श्रौगुलके पासही का ऊंचा और पेड़ पत्तों से गुञ्जान पहाड़ पर, एक घूम घुमौवे रास्ते से चढ़ रहा है। समय तीसरे पहरका है, धूपकी तेज़ी वैसी ही है,-परन्तु जिस रास्ते से यह चढ़ रहा है, उस रास्ते पर घने पेड़ों की छाया से धूपकी गर्मी मालूम नहीं पड़ती, तौ भी—उस नौजवान का खूबसूरत चेहरा पसीने से लथ-पथ होरहा है। वह बार-बार रुमाल से मुंह पोछता हुवा अपनी ही धुन पर बढ़ा जाता है। आध घण्टे तक इसी तरह चलने के बाद—उसको ऊबड़-खाबड़ रास्ता मिलने लगा। वह अब उस तेज़ी से न चलकर,-धीरे-धीरे पत्थर के ढोकों पर पैर रखता हुवा आगेकी तरफ़ बढने लगा। उसको इस तरह चलते हुए भी घण्टे भरके क़रीब होगया, मगर उसका ठिकाना अभीतक नहीं आया। वह बार-बार ऊपरकी तरफ़ देखता हुवा, उसी तरह बढ़ता ही जाने लगा। पहाड़ बहुतही ऊंचा था। वह

जब उसके बीचो-बीच आ पहुंचा तो,—तरह-तरह के सुन्दर फल-फूलों से लदे हुए पेड़ दिखलाई पड़ने लगे । वह जितना जितना बढ़ता जाता था, उतने उतनेही खूबसूरत पेड़—पौधे दिखलाई पड़ते थे । वह क़रीब पन्द्रह मिनट चलने के बाद, रास्ते ही पर बहता हुवा एक झरने के पास बैठ गया और पासही फले हुए अंगूर के एक गुच्छे को तोड़, उसको खाने लगा । झरने का जल शीशेकी तरह निर्मल दिखलाई पड़ता था । तोड़े हुए अंगूरों को खाने के बाद, उसने अञ्जुली से पानी उठाकर पीया और हाथ, मुंह धोकर ठण्डे हो, झरना पारकर वह उसी तरह ऊपरकी तरफ़ चढ़ने लगा । क़रीब दस बारह मिनट चलने के बाद वह लता कुञ्जों को हटाता हुवा एक लम्बे चौड़े दर्रेके भीतर घुसा । उस दर्रेके एक किनारे एक बहुत बड़ा झरना गिरता था । वह सँभल संभल कर उसीके बगल से होता हुवा पाव मीलतक चलने के बाद, एक फाटक की सूरत पर बनेहुये बहुत बड़े पत्थर के पास पहुंचा । उसके अगल-बगल में फन उठाए हुए-पत्थर के दो अजदहे बने हुए थे । उसने वहां आतेही बाईं बग़ल वाले अजगर के मुंहमें हाथ डाल, कुछ देरतक इधर उधर घुमाता रहा, इसके बाद वह उस फाटक के भीतर घुसा । कुछ दूर चलने पर उसे एक पत्थर ही का खुलाहुवा दरवाज़ा मिला । वह उसके अन्दर घुसा, घुसते ही वह दरवाज़ा आप से आप बन्द होगया । अब वह एक सुरङ्ग के अन्दर था । मगर—कारीगरों ने उस सुरङ्ग को ऐसी तरकीब से बनाई थी, जिससे वहां काफ़ी रोशनी होरही थी, वह उसी रोशनी के सहारे कई एक बन्द दरवाज़ों को खोलता हुवा एक ऐसे दरवाज़े पर पहुँचा,-जहां उसी तरह के दो अजदहे फन उठाएहुए

बैठे थे। उसने अब को दहने बग़ल वाले अज़दहे के मुंह में हाथ डाल कई बार इधर उधर घुमाया। उस के वैसा करते ही वह बन्द दरवाज़ा आप से आप खुलगया। खुलते ही— उसके अन्दर से दिलको मश्त करदेने वाली खुश्बू आने लगी। वह उसके अन्दर घुसा। उस के घुसते ही वह दरवाज़ा बन्द होगया। अब वह एक बहुत बड़ा खुशनुमा बाग़ में था। जहां तरह-तरह के मेवे फले हुए—अपने भार से पेड़ों को झुका रहे थे। हज़ारों तरह के फूल खिलकर अपनी खुश्बू से चारों ओर मश्त कर रहे थे। सभी पेड़ पौधे क़ायदे से लगे हुए थे। क्यारियों पर तरह-तरह के फूलों का बहार था। कहीं चमेली थी और कहीं जूही थी तो थी कहीं मौलसिरी और चम्पा थी। कहीं अंगूर थे और कहीं सेव थे तो कहीं अनार और सन्तरा थे। यहाँ हर मौसम के फल फूल एकसा फले हुए दिखलाई पड़ते थे। बाग़ के बीचो बीच एक बहुत बड़ा बङ्गला था,—उसके सामने ही फौवारा छूट रहा था। बङ्गले के अग़ल बग़ल दो निर्मल चश्मे बह रहे थे। देखने पर-मालूम होता था -वहाँ किसी ने करोड़ों रुपैया खर्च कर—पहाड़ को काट-इस तरह का स्वर्गीय भवन बनाया है। वहां पर मौसिम भी मालूम पड़ता है-एकसा रहता था। उस जगह आकर—किसी की भी तबीअत कभी हटने की नहीं करती थी। उस बड़े बङ्गले से आठ नौ सौ क़दम की दूरी पर-इधर उधर कई एक छोटे-छोटे बङ्गले भी बने हुए थे। वह नौजवान—धीरे-धीरे रवीशों से होता हुवा बड़े बङ्गले की तरफ चला। वह बंगला संगमरमर के पत्थरों से, पच्चीकारी करके बना हुवा था। अभी वह बंगले के पास भी नहीं पहुंचा था इतने में—नीचे के बरामदे से-निरञ्जनी, प्यारी निर-

अनी ? आगई ? कहने की आवाज़ आई। उसके सुनते ही-उसने कुछ आगे बढ़कर हंसते हुए कहा—हां, अत्मा-राम, मैं आगई, आज कई हफ्ते के बाद तुम्हे देखने का इत्तफाक हुवा। उसकी यह आवाज़ सुनते ही, बंगले के अन्दर से एक छोटासा खूबसूरत कुत्ता निकल कर, तेजी के साथ दौड़ता हुवा, उसके पास आ, उसकेपैर पर दोनों पैर चढ़ा, खुशी से उछल उछल कर उसे सूंघने लगा। उसको ऐसा करते देख-उसने मुहब्बत से उसके सरपर हाथ फेरते हुए कहा-चीनी,-बस अब रहने दे,-तुझे मेरे आने की सबसे बढ़कर खुशी है। आज मैं फिर अपने ही हाथों से तुझे खिलाऊंगी। उसकी ऐसी बातें सुनने पर भी वह अबोध जानवरने-उछलना-कूदना नहीं छोड़ा। इतने में बँगले के अन्दर से एक तेरह-चौदह बरस की खूबसूरत लडकी का हाथ थामे हुए एक साठ बरस के वृद्ध ने निकलकर-उसकी तरफ देखते हुए कहा-बेटी, निरञ्जनी,—तुमने तो दो दिन के बदले कई हफ्ते लगा दिए हम लोग तुम्हारे लिए कितने परेशान हो रहे थे। कहो कुशल मंगल से तो हो ? यह सुन उसने दौड़कर उनका पैर छूवा और उस लड़की से गले-गले मिलकर कहा—आपके आशींबाद से सब कुशल-मंगल है। क्या करूं, मैभी कहीं अटकना नहीं चाहती थी, मगर काम ही वैसा आपड़ा जिससे इतने दिनों तक रुकना पड़ा। कहिए मा तो अच्छी हैं ? इतना कहकर उसने अपने सिर पर से साफा उतार डाला। हमतो उसको देखकर पहले. एक खूब सूरत नौजवान लड़का ही समझते थे, मगर अब साफा उतार ने के बादतो एक निहायत हीहसीन सोलह सत्रह वरस की नाज़नी दिखलाई पड़ने लगी। उसकी बातें सुन उन वृद्ध ने

कहा, हां वेटी, वह मजे में है। भीतर रसोई बना रही है। चलो उससे मिललो। सबसे ज्यादा वही तुम्हारे लिए व्याकुल होरही है।

निर—मेरे लिए उन्हे इतनी फ़िक्र नहीं करनी चाहिए थी क्या मैं—किसी से किसी बातमें कम हूँ, जो जल्दी से किसी के कब्जे में चली जाती। (लड़की से) प्यारी वहन रञ्जिनी, कहो तुम तो राज़ी खुशी से हौन ?

रञ्जि—तुम्हारे विना जोजी, मेरी राज़ी खुशी कहां ? अब आगई हो, मेरी तबीयत औरकी और होगई।

निर—(मुहब्बत से उसका मुंह चूमकर) तुम्हारी मुहब्बत को मैं अच्छी तरह से जानती हूं बहन, चलो, अब भीतर चलकर मासे मिललें। इसके बाद वृद्धका हाथ थाम दोनो बहन अन्दर चली आईं। वह बङ्गला बाहर से जैसा वना हुवा था, उससे भी बढ़कर खूबसूरती के साथ अन्दर से भी बना हुवा था। उसमें कई एक छोटे—बड़े सुन्दर-सुन्दर कमरे थे। क़ायदे के साथ हम्माम और सरडाल बना हुवा था। हर एक कमरे, तरह-तरह के खूबसूरत सामानों से सजा हुवा था। बेतीनो घूमते फिरते एक बहुत बड़े कमरे में आ पहुंचे। इतने हो में—एक पचास—पचपन्न बरस की वृद्धाने आकर—बड़ी मुहब्बत से--निरञ्जनी को अपनी गोद में उठा-छलछलाती हुई आंखोंसे उसके मुंहको देख कर कहा—बेटी तुम तो बड़ी दुबली होगई हो ? क्या तुम्हें इधर कुछ बीमारी हो गई थी ? अगर—ऐसाही था तो इतने दिनों तक, क्यों परदेश ही में रूकी रही ?

बृद्ध—हां, पहले से चेहरा तो कुछ कुछ मुरझा गया है।

निर—नहीं, मुझे न बीमारी ही हुई थी, न कहीं तकलीफ़

ही हुई आज केवल,—मैदान पर से आते हुए कुछ देर तक कड़ी धूप का सामना करना पड़ा, इसी से चेहरा कुछ उतर गया होगा।

बृद्धा—अच्छा, बेटी. अब इस दुःखिनी को छोड़ कर कहीं जानेका नाम न लेना बड़ी-बड़ी मुश्किल से तो-तुम दोनों को बचाकर रक्खी हुई हूं, नहीं तो आज तक वंशिया न जाने क्या कर डालता और उसके बाद नजाने वे तीनों रांड क्या करके छोड़ती। हाय? वह पहले का दिन याद आतेही कलेजा फटने लगता है।

बृद्ध—खैर अब इन सब बातों से क्या मतलब? परमात्मा जिस तरह से रखना चाहते हैं, उसी तरह से रहना पड़ता है। यह अच्छा हुआ कहो कि, हम लोग एक बुरी जगह से निकल कर इस स्वर्ग भवन में आ पहूंचे। अब फ़कत महाराज बलदेवसिंह और श्यामसुन्दरसिंह की फ़िक्र पड़ी हुई है।

नि०—उन सबों को भी यदि ईश्वर ने चाहा तो जल्दी ही छुटकारा मिलेगा। दोनों कुमार तिलस्म के अन्दर आचुके हैं। अतएव तिलस्म टूटने में कुछ देर नहीं है। जब तिलस्म टूटेगातो वे सब भी उस बन्धन में नहीं पड़े रहेंगे?

बृद्धा—मगर उन सब हराम ज़ादियों ने उन सबों को सता सता कर किसी कामके लायक रक्खा होगा। अफ़सोस? अद्भुत नाथके फेर में पड़कर आपने नाहक़ ही वंशिया को रक्खा? मैंने तो उसी समय कह दिया था, जिस समय उसकी सूरत देखी थी। मगर आपने अपने सीधे साधे स्वभाव से उसपर ज़राभी कान नहीं दिया। अन्त में हम लोगों को धोका उठाकर सब कुछ गंवाने के बाद आपके ऐसा तिलस्म

से वाकिफ़ कार दारोगा होने पर भी बड़ी बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। इन लोगों की बात चीत से और रङ्ग-ढङ्ग से अब आप लोग समझही गए होंगेकी—ये वृद्ध, दारोगा, अच्युतानन्द है, और ये वृद्धा उन्ही को धर्म पत्नी सुशीला है। बरसों तक ये सब तिलस्म ही में फंसे, तरह तरह की तकलीफों को उठाते रहे,—अन्त में इनके हाथ एक ऐसी चीज़ लगी जिससे,—वे अपनी औरत और दोनों लड़कियों को वहां से निकाल इस स्वर्ग भवन में ले आए यह तिलस्म का एक अत्यन्त रमणीय स्थान है। यहां की कारीगरी देखते ही बनती है। यहां हमेशा-सब तरह की चीज़ें मिला करती है। यह जगह—तिलस्म के महाराजों का दिल-बहलाव करने की है। यहां दौलत की और आराम करने की चीजों का शुमार नहीं है। यह जगह—सिवाय इनके और महाराजों के और किसी को मालूम नहीं था। इसी लिए ये वहां से निकल कर यहां आए हुए थे। यहां तरह तरह के तिलस्मी सामान भी थे। महामाया वगैरह इस सुन्दर स्थान को नहीं जानती थी। यहां आने पर कुछ दिनों के बाद उनकी बड़ी लड़की निरञ्जनी मरदाने भेषमें, तिलस्मका हाल-चाल लेने के लिए निकली हुई थी। अस्तु—सुशीला की बातें सुन-कर वृद्ध दारोगा ने कहा—अब इस नित्य की बातों को दोहराकर कुछ फ़ायदा नहीं, लड़की भूखी आरही है, तुम सब से पहले इसको खिलावो, पिलावो तो कुछ बातें हो। यह सुन सुशीलाने निरञ्जनी की तरफ़ देख कर कहा-तुम नहा धोकर कपड़ा बदल लो, तब तक मैं भी खाना ले आती हूं? अपनी बहन को लेकर निरञ्जनी चली गई। उसके जाने के बाद सुशीलाने कई थालियों में परोस कर खाना लाके रक्खा।

इतने में निरञ्जनी भी नहा धो कर जनाना कपड़ा बदल कर रञ्जिनी के साथ आगई वृद्ध दारोगा ने अपनी दोनो खूबसूरत लड़कियों को-उस मुसीबत के समय में भी तरह-तरहका हुनर सिखाया था। वे दोनो-कैसा ही कठिन कार्य क्यों नहो, अकेले हीं कर सकने का दावा रखता थी। उन दोनों की बुद्धि, विद्या चातुरी को देख वृद्ध दारोगा मनहीमन बहुत हीं सन्तोष होकर भविष्य में अच्छा होने का भरोसा रखते थे। दोनों लड़कियों के आने के बाद चारों ने बैठ कर प्रसन्नता के साथ भोजन किया। निरञ्जनी के चीनी ने आज बहुतदिनों के बाद पेट भर कर खाया। भोजन करने के बाद—चारो आदमी एक-एक तकीया को ले, गलीचे पर बैठकर आपस में बात चीत करने लगे। दारोगा ने निरञ्जनी से पूछा कहो, बेटा, तिलस्म का क्या हाल है? वंशिया कहां है? वेतीनो बहीनें क्या करती हैं! अद्भुतनाथ की क्या अवस्था है? दोनो कुमार कब और कैसे आपहुंचे? उनकी बातें सुन उसने एक एक करके सब हाल बताने के बाद कहा—अभीतक तो उनकी सखियों के फेरही में पड़कर दोनो कुमार इधर उधर चक्कर काट रहे हैं। मगर उम्मीद है अबशीघ्रही उस निश्चित समय पर वेदोनो तिलस्म तोड़ने में हाथ लगावेंगे।

दारोगा—यहतो मानी हुई बात है अगर ऐसा नहोता तो बुजुर्ग लोग क्यों लिख जाते। ऐसे-समय मेरा वहीं उपस्तिथ रहना बहुत जरूरीथा मगर—मेरी ताकत ने मुझे बिल्कुलही जवाब देरक्खा है।

निरञ्जनी—मैं इसी लिए तो—दोनो कुमारों से मिले बिनाहीं आपसे आज्ञा लेने के लिए चली आई। नहीं तो—मैंने आपसे सब कुछ सीख लिया,—मुझे तिलस्म में कुछ

बताने की जरूरत न थी, मैं वहीं रह कर उन दोनों की हर-एक बातों में मदद करती।

सुशीला—नहीं नहीं, अब तुम वैसी जगह मत जावो?

निरञ्जनी—मां, तुम डरती क्यों हो, अब मेरा कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता। मैं दिखा दूंगी की तिलस्म के सच्चे दारोगा की लड़की क्या कर सकती है?

दारोगा—बेशक, तुम सब कुछ कर सकती हो। मैं इस बातको दिल से ही मानता हूं। मगर बेटी, तू अपने हौसले को ज़रा इस समय रोकरख। मैं दो एक रोज सोचने के बाद जो कुछ मुनासिब होगा, तुझसे कहूँगा।

रञ्जनी—अगर जी जी, तुम जावोगी तो मैं भी तुम्हारे साथ चली चलूंगी।

सुशीला—यह दूसरी भी उभड़ने लगी। क्या तुम दोनों को हमलोगों की ज़रा भी मुहब्बत नहीं है।

निरञ्जनी—है क्यों नहीं, बहुत कुछ मगर इस तरह चुप—चाप कब तक पड़ी रहोगी। ज़रा हम लोगों को मैदान में उतर कर कुछ कर दिखाने तो दो?

दारोगा—हां हां खुशी से तुम लोग करो। मैंने जो कुछ भी परिश्रम तुम लोगों के लिए किया, वह किस दिन काम आवेगा?

निरञ्जनी—देखो, माधुरीने अपने हौसले को बढ़ाकर अद्भुतनाथ तक को अपने क़ाबू में कर रक्खा है। अगर हम लोग भी उसी तरह से उत्साह बढाती हुई जायंगी तो अपने दुश्मन से बदला न ले सकेंगी?

दारोगा—क्यों नहीं, बहुत अच्छी तरह। मगर शाबास

माधुरी, तूने बहुतही अच्छा किया.—अगर ऐसाही करती जायगी तो तेरा नाम भारत बर्ष भरमें गूँज जायगा।

निरञ्जनी—इसमें क्या शक है?

रञ्जनी—क्यों जीजी, तुम उससे मिली थी?

निर—हाँ, मिली तो थी, मगर मैंने अपने को ज़ाहर नहीं किया।

दारोग़ा—अबकी जावो तो उससे मिलकर मेरा सँदेशा कहने के बाद अपने को ज़ाहर कर दो। वह तुम्हे पहचानकर बहुत ही खुश होगी और उसके ज़रीए से तुम्हे और तुम्हारे ज़रीए से उसे बहुत कुछ मदद मिलेगी।

निर—मैं ज़रूर मिलकर अपने को ज़ाहर करूंगी। वह बड़ीही लायक़ और सुशील है। वह ख़ाहमख़ाह किसी की बुराई नहीं चाहती है। उसको अपने काम पर कुछ भी घमंड नहीं है। वह कुमार रणधीर सिंह को दिलही से चाहती है। उसको कुमारी सावित्री और किरण शशी से ज़रा भी डाह नहीं है।

दारोग़ा—उसकी बहन कादम्बिनी ने क्या अभी तक भी उसके साथ रह कर उसको नहीं पहचाना है?

निर—जी नहीं, मगर अब वह ज्यादे दिन छिप नहीं सकती?

रञ्जनी—परन्तु जी जी, तुमने उसको कैसा पहचाना?

निर—मुझसे और उसकी पेयारी दुर्गा से दोस्ती होगई, इसी लिए उसको पहचाना, नहीं तो बिलकूल ही लड़कपनमें देखा था, उसको क्या पहचानती? तिसपर उसने अपनी सूरत भी कुछ काली बनाकर रंगी हुई थी।

सुशीला-बेचारी उसकी मा बड़ीही भली थी, मगर-अम्बालिका वैसी कैसे निकल आई?

दारोगा—यह सब महात्मा अद्भुतनाथ और बंशिया से मिलने का फल है।

निर—अब तो अद्भुतनाथ अपने पापों का अच्छी तरह प्रायश्चित कर रहा है।

दारोगा—मुझे तो उसके ऊपर अब भी विश्वास नहीं है। निर—इतने पर भी अगर उसने फिर पाप मार्ग पर पैर दिया तो किसी तरह से भी संभल नहीं सकता।

दारोगा—अद्भुतनाथ, बंशिया, नशीरुद्दीन, महामाया वगैरह क्या सुधरने की चीज़ हैं?

निर—मगर अद्भुतनाथ की कार्रवाई को देखकर तो मुझे कुछ सन्देह नहीं होता। अगर उसमें कुछ भी बू पाती तो माधुरी हर्गिज उसको न अपनाती। ख़ैर—उससे हम लोगों को होशियार हो रहना अच्छा है।

दारोगा—हां, नीच आदमियों का क्या भरोशा! अच्छा बेटी, थककर आई हो, अब सोने जावो। मुझे भी नींद मालूम पड़ रही है। कल मैं इस विषय में ठीक राय करके तुम्हे कहूंगा, और जो कुछ करना होगा वह भी समझाऊंगा। इतना सुनते ही—अपनी बहन रञ्जनी को लेकर निरञ्जनी एक दूसरे कमरे में चली आई। यह कमरा उससे कुछ छोटा था परन्तु सजावट की चीज़ों में उससे कहीं बढ चढ़ के था। दोनों बहनो ने वहां आते ही सोने का कपड़ा बदल डाला इस समय वह कमरा गैसकी रोशनी से जगमगा रहा था। चारो तरफ़ की खिड़कियां खुली हुई थी। उसके जरीपसे-मंद

मन्द हवा आकर तरह तरह के फूलों की खुशबू देरही थी। आमने सामने—दो मखमली गद्देदार पलंग बीछा हुवा था। कपड़ा बदल डालने के बाद निरञ्जनी ने रञ्जनी से कहा—सचमुच बहन, माकी मुहब्बत हम लोगों पर बहुत ही ज्यादा है। इस लिए वे हम लोगों को बच्चेही समझती है। पिताजी औरही तरह के आदमी है। इस लिए उनको हम दोनों की लायक़ी देखने और सुनने का बड़ाही शौक़ है। वे कभी किसी से डरते नहीं हैं, इस लिए उन्होने हम लोगों को भी वैसी ही शिक्षा दी है।

रञ्जनी—ठीक है, तुम्हारे बहुत दिनों तक न आने से पिताजी वहां तक घबड़ाए हुए नहीं थे। उनको तुम्हारे ऊपर विश्वास था। वे बारबार मा को समझाकर कहते थे—तुम अपनी लड़की को नादान मत समझो। वह लाख में से बे लाग़ निकल आ सकती है। कभी कभी तो वह मुझे भी यहां से बाहर होकर तिलस्म में जाने को कहते थे। ख़ैर जी जो, अबकी तुम जावोगी, निश्चय ही जावोगी तो मुझे साथ लिए चलोगी?

निरञ्जनी—मैं ज़रूर ले चलूँगी। मगर इस समय नहीं एकबार मैं ज़ाहर होकर माधुरी से मिल लूँ तब ले चलूँगी। तुम लायक़ हो, होशियार हो, तुम चलोगी तो अच्छा काम करके दिखा सकोगी। इन दिनों—कटक और संभलपुर में एक अजब तरह का तमाशा हो रहा है। ख़ैर जावो बहन, अब तुम आराम करो, मैं अपने पलंग पर सोती हूं। इसी के जबाब में रञ्जनी कुछ कहाही चाहती थी, इतने में निरञ्जनी का कुत्ता चीनी—एक खिड़की के पास आकर ज़ोर-ज़ोर

से भूँकने लगा। यह देख निरञ्जनी दौड़कर खिड़की के पास आई और उसने झांक कर बाहर देखा चारोतरफ चाँदना हो रही थी,—उसके उजाले में उसने देखा—एक सुफेद शकल धीरे धीरे खिड़की के पास आ रही है। उसको देखते ही उसने चौंककर कहा—ऐं? यहाँ यह कौन इस तरह से आ रहा है?

दसवां बयान।

"बिना धोका उठाए होश आता है नहीं कुछ भी।
बिना खोजे हुए इन्सान पाता है नहीं कुछ भी॥"

बिक्रम सिंहके बेहोश होते ही जसबन्त सिंह ने बड़ी फूर्त्तीके साथ अपने बटुए में से लखलखा निकाल कर उन्हे सुँघाया, परन्तु वे किसी तरह से होश में नहीं आए। यह देख उनके ताज्जुब का ठिकाना नहीं रहा—वे कड़ी से कड़ी बेहोशी को दूर करने का लखलखा सुंघाने लगे, मगर किसी तरह भी उनको होश नहीं हुवा। अन्तमें वे उठकर—एक दवा पिलाने के लिए पहरे के सिपाही को बुलाया ही चाहते थे, इतने में एक बड़ा सा साफा बाँधे हुए खूब सूरत नौजवान ने आकर उनसे कहा—आप नाहक़ ही तिलस्मी तरकीबों से बेहोश हुए आदमी को, अपने मामूली लखलखे से होश में लाने की कोशिश कर रहे हैं। लीजिए मैं एक दवा देता हूं। इसको सुंघा दीजिए, अभी होश में आकर बैठेंगे।

जस—मगर तुम कौन हो? यहां कैसे चले आए?

वह—यह सराय है, यहाँ मैं ही क्या हरेक सख्स आ सकता है। मगर मै कौन हूं, यह पूछकर क्या करेंगे? आप पहले इस दवा को सुंघा कर इन्हे होश में तो लाइए?

जस—मैं इस तरह जो,—तुम्हारी दवा नहीं सुँघा सकता।

वह—तो आप खड़े रहिए मैं खुदही इन्हे सुंघाकर होश में लाता हूं। आप डरिए मत, अगर एक मिनट के भीतर में होश में न आए तो मुझे जो चाहे सजा दीजिएगा। इतना कह कर उसने जवाब का आसरा देखे बिना ही अपने हाथ में ली हुई कोई चीज़ को, बड़ी फूर्त्ती के साथ बैठ कर उन्हे सुंघा दिया। उसके सूंघते ही बिक्रमसिंह होश में आकर उठ बैठे और जसवन्त सिंहकी तरफ देखकर कहने लगे-क्या भीतर की बेहोश औरतें होश में आई?

जस—नहीं, अभी तक तो नहीं, मगर अब होश में आजा-यंगी। (उस नौजवान साफेवाले से) आप मेहर बानी करके उन सबों को भी होश में ला दीजिए, नहीं तो हम लोगों के लखलखे से कोई काम नहीं चल सकेगा।

विक्रम—ये कौन हैं?

जस—यह तो मुझे नहीं मालूम मगर तुम्हे होश में लाते लाते मैं हार गया तो, इन्होने ही आकर तुम्हे बात की बात में होश दिलाया।

बिक्रम—क्या आप अपने को ज़ाहर नहीं किया चाहते?

वह—यह सब बातें पीछे हो रहेगी, आप पहले यह दवा ले जाकर उन लोगों को होश में तो लाइए?

बिक्रम—मगर हम लोगों को इस तरह बे होश करने वाला कौन था?

वह—वह अच्युतानन्दका एक चेला था, उसको तो मैंने ठिकाने पहुंचा दिया। अब आप दोनो साहब भीतर जाकर उन सबों को होश में लाइए तो—फिर सब कुछ मैं बत लाऊंगा। इतना कह कर उसने एक छोटी सी अर्क़ की शीशी

उनके हाथ में दी। बिक्रम सिंह और जसवन्त सिंह उस दवा को लेकर भीतर चले आए। वह साफा वाला नौजवान बाहर ही खड़ा रहा। बिक्रम सिंहने अन्दर आते ही उन सबों को उसी दवा से होश में लाकर जान्हवीसे सब कुछ कह सुनाया उसने यह सब बातें सुनकर उसे अन्दर बुलालाने के लिए कहा। जसवन्तसिंह बाहर आए, परन्तु वह मिला नहीं। उन्होने बिक्रमसिंहको बुलाकर कहा तमाम सराय छान डाला गया, परन्तु कहीं भी उसका पता नहीं चला। अन्तमें उन्होने आकर जान्हवी से कहा—उसने सब बातें सुनकर कुछ देर सोचने के बाद कहा—मालूम होता है, वह इस समय हम लोगों से जाहर होना नहीं चाहता है।

कुसुम—इस तरह भलाई करने वाले आदमी भी बहुत कम दिखलाई पड़ते होंगे।

किरण—इस में क्या शक है। मगर उसको पहचान रखना तो बड़ाही जरूरी था।

जान्हवी—आज न पहचाना गया, परन्तु किसी न किसी रोज जरूर ही पहचाना जायगा। जरा देखो तो स्वामी जी अपने ठिकाने हैं या नहीं?

जसवन्त—उसे मैं देख चुका हूं। वह अभीतक उसी तरह बेहोश पड़ा हुवा है।

जान्हवी—तुम जाकर वहीं बैठे रहो। कहीं उसे चाल खेलकर उड़ा न लेजाय। यह सुन जसवन्तसिंह चले गए। उनके जानके बाद जान्हवी ने कहा आज रात को अच्युतानन्द के चेले सब कुछ न कुछ उपद्रव खड़ा करेगें, ताज्जुब नहीं वे यहां के राजा को भी उभाड़ ले आवें। इस लिए-हम लोगों को इसीदम चुपके से कहीं चल देना चाहिए?

बिक्रम—मगर इतने आदमी, हमलोग कैसे इस तरह चल सकते हैं?

जान्हवी—इसका उपाय मैंने सोच लिया है। तुम अफ़सर से जाकर कहदो कि–तुम अच्छे २ सात घोड़े को कसकर तैय्यार कर दो, हमलोग घण्टे दो घण्टे इस शहर का तमाशा देखकर चले आते हैं। उसको अभीतक कुछ मालूम नहीं है। वह खुशी खुशी सब तैय्यार करदेगा। जसवन्तसिंह को समझाके कह दो– वह अपनी सूरत किसी दूसरे परदेशी की तरह बनाकर फाटक से कुछ दूर जा खड़े हो। हमलोग बोरका पहन, घोड़ेपर सवार हो वहां जब पहुंचे तो—वह भी हमलोगों के पीछे पीछे आवें। चौक से आगे बढ़कर एक जगह अच्छे २ घोड़े बिकते हैं। वहां—अपने लिए एक घोड़ा खरीदकर लेलें। फिरतो हमलोग रातो रात यहां से दूर निकल जायंगे। यदि हमलोग यहां रहें तो भी कोई कुछ नहीं कर सकता है, परन्तु—जान बूझकर खतरे में रहना किसी कद्र भी अच्छा नहीं है। यहां से निकल जायंगे तो दस कोसकी दूरी पर मेरा जाना हुवा एक तिलस्मी तालाब है। उसी में हिफाज़त के साथ रहकर हमलोग काम करते रहेंगे। यह सुन बिक्रमसिंह चले गए। उनके जानेके बाद ये सब आपस में धीरे, धीरे बातें करने लगीं। पन्द्रह बीस मिनट के बाद विक्रमसिंह ने आकर सब बन्दोबस्त ठीक होने की ख़बर दी। ये सब भी बुरका पहन कर चलने के लिए तैय्यार थीं। वहां से उतरकर फाटक पर आईं। घोड़े सब दुरूस्त थे। सातो आदमी सवार होकर धीरे धीरे चौककी तरफ़ बढे। अफसर भी साथही आया चाहता था, परन्तु बिक्रमसिंह ने उसे वहीं रहने के लिए ज़ोर देकर रोकदिया। अच्युतानन्द को इनसबों

ने उसी हालत में छोड़दिया। फाटक से कुछ दूर आगे बढ़ने पर उन लोगों को एक मंद्राजी आदमी मिला। जिसने बिक्रम सिंह की तरफ़ देखकर कुछ इशारा किया। वे समझ गए कि—यह जसवन्तसिंह हैं। इशारेका जवाब इशारे हीमें देकर यह लोग धीरे, धीरे आगे बढ़े। वह मंद्राजी भी इनलोगों के पीछे पीछे जाने लगा। चौक पार करने के बाद—एक जगह इन लोगों को बीसों कसे कसाए घोड़े रक्खे हुए मिले। मद्राजी ने आगे बढ़कर उनमें से एक अच्छे नसलका घोड़ा, खरीदा और उसपर सवार हो, उनलोगों का पीछा किया।

रात पहर भर के ऊपर आ चुकी थी। चारो तरफ़ चांदना हो रहा था। ये लोग शहर पनाह के बाहर होकर मैं-दान में निकल आए,—वहां आतेही जान्हवी ने कहा—बस, अब घोड़े को तेज करके इससे दूर निकल चलो। हम लोगों को सबेरा होनेके पहलेही उस तिलस्मी तालाब पर पहुँच जाना चाहिए।

कुसुम—क्या उस तालाब पर अच्युतानन्द नहीं आ सकता है?

जान्हवी—आ क्यों नहीं सकता है मगर उसकी ताली भी तो होनी चाहिए?

कादम्बि—क्या उसकी ताली तुम्हारे पास है?

जान्हवी—हां,—है, मैंने बड़ी मुश्किल से उस ताली को अपने हाथ किया है। अच्छा, अब घोड़े को बढ़ाते चलो। इतना कहकर उसने घोड़े को तेज़ किया। उसके तेज़ करते ही औरों ने भी तेज़ किया। सबके आगे जान्हबी थी, उनके बग़ल ही में कुमारी किरण शशी और कुसुमलता थी। उनके कुछ पीछे कादम्बिनी और माधवी थी। उनके पीछे जसवन्तसिंह

थे। सबसे पीछे सरला और बिक्रमसिंह थे। तिलस्म में जितनी सड़के देखी गई—सब बड़ी चौड़ी चौड़ी देखी गई। तिसपर इस नील नगर की सड़क बड़ी चौड़ी और मसाले से से पटी हुई थी। रातके सन्नाटे के समय—आठ आठ घोड़ेके टापों की आवाज दूर—दूर तक सुनाई दे रही थी। ये लोग दोदो तीन तीन मिनटों में पाव मीलका रास्ता तैकर रहे थे। दो तीन कोस आगे बढ आने के बाद बिक्रमसिंह ने, अपने घोड़े को सरला के पास ही भिड़ाकर दिल्लगी के ढंग से कहा—क्यों सरला, यह घोड़ा तुम्हारा है या तुम्हारे चचा का।

सरला—(उनके भावों को समझकर) क्या तुम्हे इसकी तेज़ी पर डाह होकर ख़रीदने का शौक़ चर्राया हैं?

बिक्रम—नहीं नहीं,—फ़क़त मुझे यह जानना है कि—यह घोड़ा किसका है?

सरला—थोड़ी देरके लिए समझ जाओ कि—यह घोड़ा तुम्हारा ही है, तो फिर क्या करोगे?

बिक्रम—तब तो तुम्हे उतारकर इस पर मैं सवार होऊंगा।

सरला—तुमने इस तरह कितनों को उतारकर सवारी किया?

बिक्रम—अभी तक तो किसी को नहीं, मगर आज ऐसा ही दिल चाहता है।

सरला—तब तुम इसी दम यहां से वापस चले जावो?

बिक्रम—क्यों मेरे वापस जाने से क्या इस घोड़े की सवारी मिल जायगी?

सरला—क्यों नहीं, मैं अपने ठिकाने पहुँचकर इस घोड़े को भेजदूंगी। फिर तुम इसी पर सवार होकर चले आना।

बिक्रम—मैं ऐसी तकलीफ़ और इन्तज़ारी को गावरा

नहीं कर सकता। तुम इस घोड़े पर चली आवो, नहीं तो कहा—मैं हीं उस घोडेपर चला आऊं ?

सरला—बस, जनाब, आप अपनी ऐसी बातों को अपने ही पास रखिए,—मुझे न घोड़ा ही बदलना है न दूसरे को अपने घोड़ेपर सवार ही कराना है।

विक्रम—चाहे तुम मानो, चाहे न मानो, मुझे तो इस घोड़े पर सवार होना हो है। देखो-मैं आगया !

सरला—ऐं ऐं, यह तुम क्या कर रहे हो। देखो-अगर आवोगे तो मैं चिल्लाकर सब से कह दूँगो। फिर तो जान्हवी तुम्हारी खबर लिए बिना छोड़ेंगी नहीं।

बिक्रम—क्या तुम्हे मेरे आने से डर मालूम पड़ता है ?

सरला—मैं औरों से तो शायद डरभी जाऊं. मगर तुमसे तो किसी हालत मे भी डरती नहीं।

बिक्रम—क्या मुझे तुमने नामर्द समझ रक्खा है ?

सरला—(हंसकर) नामर्द नहीं तो और क्या हो। जिस कामके लिए तुम्हे भेजा था, उसकी धुनही में तुम इधर, उधर भटकते रहे, और हमलोगों ने उस काम को पूरा करके तुम्हारे सामने दिखा दिया।

बिक्रम—मगर यह तो बतावो, तुम से मदद मांगने के लिए कौन गया था ?

सरला—कोई नहीं गयाथा, परन्तु देरी करने का माने क्या निकलता है, जानते हो ? बस, अब ज़रा हटकर बातँ करो। नहीं तो सबके सामने तुम्हे शर्मिन्दः कर दूंगी।

बिक्रम—तो क्या तुम यही धमकी दिखाकर मुझे दूर किया चाहती हो ?

सरला—नहीं, मैं क्यों धमकी देकर दूर करूंगी, तुम खुशी

से रहो, मगर ज़रा हटकर रहो। इस तरह से सटे, सटे चलना कोई सभ्यता का क़ायदा नहीं है। अगर आगे वाले देखेंगे तो क्या कहेंगे ?

बिक्रम—सरला और बिक्रमसिंह कहेंगे। और क्या कहेंगे।

सरला—मगर इस सूरत में तो हमलोग वह सब नही कहलावेगें।

बिक्रम—इस सूरत पर गोली मारो और उस सूरत की बातें करो।

सरला—तुम पहले गोली मारोगे या मैं पहले गोली मारूं।

बिक्रम—दोनों के दोनों एक साथही गोली मारकर ठिकाने लग जायँ।

सरला—क्या तुम्हे अपनी जान भारी पड़ी है ? इसीसे मैं कहती हूं कि—तुममें कुछ भी वीरता नहीं है। तुम कामों से जी चुराया करते हो। इतने बडे ऐयार होकर भी तुम अपना नाम रक्खा नहीं चाहते हो ?

बिक्रम—यह तो तुमने ज़रा कड़ी कड़ी बातें सुनाना शुरू कर दिया ?

सरला—तो फिर क्यों मुझसे बोलने के लिए बढ़े आते हो ?

बिक्रम—तो क्या तुमसे मैं न बोलूं।

सरला—कौन कहता है कि—न बोलो, मगर क़ायदे के साथ बोलो।

बिक्रम—तो किस क़ायदे के साथ बोलना होता है, वह तुम मुझे सिखादो।

सरला—क्या तुमने इस समय, इस घोडे पर की सवारी को, एकतह की पाठशाला समझ रक्खा है। भला इस दौड़ा दौड़ी में किसी को कायदा सिखाया जासकता है।

बिक्रम—अगर ऐसे ही मौकेपर सीखने की बातें होतो, क्यों नहीं सिखाया जा सकता है। मगर तुम तो इस समय, हवाके ऊपर घोड़ा, और घोड़े के ऊपर सवार हो। फिर भला तुम्हारा मिज़ाज कब मिल सकता है ?

सरला—(हंसकर) ठीक है, मेरा मिज़ाज़ क्यों मिलेगा ? तिसपर तुम मेरे साथ हो, भला क्या कहना है। (कानलगाकर) मगर सुनो तो,-पीछे से बहुत से घोड़ों के टापों की आवाज़ आरही है। क्या मुझे भ्रमतो नहीं हुवा है ?

बिक्रम—(ग़ौर से सुनकर) हां, है तो सही, मालूम होता है हमारे दुश्मन को पता लग गया होगा, इसलिए पीछा करते हुए आरहे होंगे। (घूम कर देखते हुए) ठीक है, देखो, मसाल की झिलमिलाती रोशनी भी तेजी के साथ इधर ही आरही है। उन्हे पुकारकर कह दो, वे क्या कहती है ?

सरला—(कुछ ज़ोर से) ज़रा सुनिए तो,-मालूम होता है, हमारे दुश्मन हमारे पीछे लगे हुए तेज़ी के साथ आरहे हैं। जान्हवी और कुसुमलता, आपस में तिलस्म सम्बन्धी बातें कर रहे थे, उसकी आवाज़ कानमें पड़ते ही जान्हवी ने घोड़े की चालको कुछ कम कर दिया। साथ ही औरों ने भी अपने अपने घोडेके चालों को कम किया। जान्हवी ने घूम कर देखा वास्तव में कई एक मसाल बड़ी तेजी के साथ इसी तरफ़ आरहे थे। उसको देख उसने कहा-कोई परवाह नहीं; उन्हे आनेदो। जसवन्तसिंह ! तुम कुमारियों को लेकर आगे बढ़ो,-यहां से कुछ ही दूर पर एक टूटा फूटा कूआ मिलेगा, उसके दहीनी ओर जाकर एक देव मन्दिर के पिछवाड़े खड़े रहो। मैं विक्रमसिंह को लेकर इनलोगों का मुकाबला करूंगी।

बसवन्त—यह राय तो मुझे पसन्द नहीं है। कहीं इनके पीछे बहुत से और भी आजायं तब ?

जान्हवी—तुम इस बातकी ज़राभी फिक्र न लो। हज़ारों के लिए मैं अकेले ही काफ़ी हूँ। इतना सुनते ही वे उन दोनों को छोड़ कुमारियों को लेकर जाया ही चाहते थे, इतने में सरला ने चिल्लाकर कहा—वह, देखिए उस तरफ से भी बहुत से मसाल आते दिखलाई पड़ रहे हैं। यह सुन सबके सब चकरा कर उस तरफ़, देखने लगे।
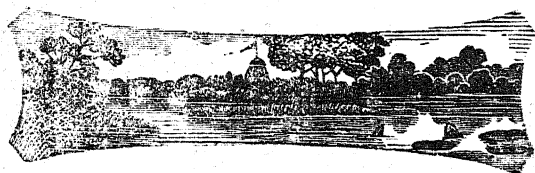
ग्यारहवां बयान ।

"भूलकर भी तुम न जावो, उस तरफ, जन्जाल है ।
सोचते कुछभी नहीं, पर तुम्हारा काल है ॥"
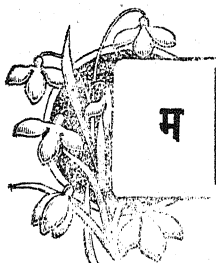
मदन मोहनी के जानेके बाद बहुत देरतक कुमार चन्द्रसिंह और जयदेव में बातचीत होती रही, अन्त में दोनो ने भोजन मंगाकर भोजन किया। रास्तेकी कड़ी थकावट से भोजन करते ही कुमार को नींद आने लगी, यह देख, जय देवने उन्हे सोने के लिए कहा। उनके सो जाने पर-उन्होने उनके दो ऐयारों को बुलाकर पहरे में रहने के लिये सख्त ताकीद कर आप घण्टे भर के लिए शहर देखने के लिए सराय से नीचे उतरे। इस समय उनकी सूरत और पोशाक खासे रईश की तरह थी। बदन से रूह की गमक 'आरही थी। वे धीरे धीरे इधर उधर टहलते हुए-शहर के बाहर निकल पड़े। नदी के किनारे ठण्डी ठण्डी हवा बह रही थी। इस समय छोटी छोटी नावों के भीतर रहने वाले मल्लाह के अलावे वहां और कोई भी दिखलाई पड़ता था। दूर दूर पर रोशनी होरही थी। हर एक घाट बड़ी खूबसूरती के साथ गज किए हुए बनाथा। जयदेवको यह स्थान कुछ देर तक टहलने के लिए बहुत ही पसन्द आया। रात पहर भरके ऊपर आचुकी थी। ये धीरे-धीरे नदी की बहार देखते हुए टहलने

लगे। टहलते टहलते ये एक ऐसी जगह पर पहुंचे; जहां बड़े बड़े लट्ठों का तूमार लगा हुवा था। वहां पहुँचकर वेसंभलते हुए धीरे धीरे उसको पार किया ही चाहते थे, इतने में दूर की धुँधुली रोशनी के सहारे उन्होंने देखा एक सुन्दर बालिका घबड़ाहट के साथ आगेकी तरफ़ बढ रही है। वे चौंक उठे उन्होंने उसके चन्द्रबदन की ज़रासी झलक देखलीथी, इस लिए उन्होंने समझा—वह कैसाही कपड़ा पहने हुए क्यों न हो, उसका मुंह बड़ाही सुन्दर है। वैसा सुन्दर और दिलको लुभाने वाला, मुंह आजतक कभी नही देखा था।

इस तरह इस आधी रातके वक्त, ऐसे स्थान में, ऐसी सुन्दरी बालिका को देख जयदेव पहले तो कुछ डरे, परन्तु तुरन्त ही संभल गए। वे एक चालाक और बहादुर ऐयार थे। उन्होने उसका पीछा किया। वह लड़की तेज़ी के साथ भागकर पुलके उसपार एक सुनसान जगह के एक टूटे फूटे मकान के पासही आकर ग़ायब होगई। जयदेव को इस से बड़ाही अफसोस हुवा। वे उसको इधर उधर ढूंढकर वापस हुवा ही चाहते थे, इतने में पासही किसी के पांव की आहट पा. चौंककर पीछेकी तरफ़ देखा। वही सुंदरी बालिका उनके सामने खड़ी है। उनको यह देख बड़ाही ताज्जुब हुवा। उहोने कुछ पास आकर उससे कहा- क्या तुम मुझे देखकर डर गईथी?

उनकी बातें सुन उस लड़की ने कांपती हुई आवाज में बहुत ही धीरे धीरे कहा—नहीं, मैं तुम्हे देखकर डरी नहीं थी, मगर मुझे तुम्हारे ही लिए डर हो आया था। देखो, होशियार होजाव, इस मकान के भीतर एक खूबसूरत आदमी का बड़ी ही बेदर्दी के साथ खून हुवा है। अगर तुम भी चले जावोगे तो तुम्हारी भी शायद वही हालत होगी।

जयदेव ने कुछ तेज़ी के साथ कहा—लड़की, तुम्हे यह सब बातें कैसे मालूम हुईं? क्या तुम इसी मकान में रहती थी?

लड़की—हां, मैं इसी मकान में रहती थी। मैंने उसे अपनी आंखों से मरता देखा है। वह बड़ाही सुन्दर नौजवान था। उसकी पोशाक भी बहुतही अच्छी थी। मैंने राजकुमारों को कभी देखा नही है, मगर मैं अन्दाज़ से कह सकती हूँ कि वह भी कहीं का राजकुमार ही था।

जय—ऐं; राजकुमार था, तो वह कौन था, उसका पहरावा कहांका सा मालूम पड़ता था?

लड़की—मैंने इधर से जाते हुए कई देश के कई आदमियों को देखा है। इससे पहरावा देख मैं हर एक को पहचान सकती हूं। वह उत्तर बिहारके आदमियों का सा-पहरावा पहने हुए था।

जय—तो क्या अभी तक वह लाश वहीं पड़ी हुई है।

लड़की—हां हां, यहीं पड़ी हुई है जभी तो उस समय से बाहर निकली हुई अभीतक अन्दर नहीं गई हूँ।

जय—वह कब का मरा हुवा पडा है?

लड़की—इस समय उसे मरे पूरे अठतालीस घण्टे होगए होंगे।

जय—ऐं, दोदिन से, अच्छा मेरे साथ चलो तो, मैं एक मर्तबः उसे देखा चाहता हूं।

लड़की ने कॉंप कर कहा—नहीं नहीं इसके अन्दर मत जावो दुष्टोंका ठिकाना; वे तुम्हारे ऊपर भी चोट करेंगे।

जय—ख़ैर मैं अकेले नहीं जाऊंगा। कई आदमियों की मदद लेकर उसके अन्दर जाऊंगा। तुम आध घण्टे तक यहीं खड़ी रह सकती हो?

लड़की ने डरके मारे उनकी चादर पकड़कर कहा—नहीं नहीं, अब तुम छोड़कर मुझे कहीं न जावो। मेरा कलेजा इस समय डरके मारे हाथों उछल रहा है।

जय—तो फिर तुम उस पारसे इस पार भागकर क्यों चली आई थी?

लड़की—मैंने देखा, तुम टहलते हुए इसी तरफ आरहे हो, इसलिए तुम्हे रोकने के लिए चली आई थी।

जय—यह मकान किसका है? यहां तुम अकेली ही रहती थी या तुम्हारे साथ और कोई भी रहता था?

लड़की—यह मकान तो-किसी का नहीं है, जिसका जी चाहे वह आकर रह सकता है। मेरे साथ मेरी एक बुढ़िया नानी भी रहती थी। मगर अफसोस, वह मुझे उसी वक्त से छोड़कर चली गई। मैं उसे खोज रही हूँ परन्तु वह मिलती ही नहीं है। उसके न होने से डरके मारे मैं घरके अन्दर जा नहीं सकती हूं, इसलिए आज दो दिन से मेरे मुंहमें एक दाना अन्नका भी नहीं पड़ा है।

जयदेवका हृदय उस सुन्दर बालिका की इस बात चीत से पसीज गया। चांदना नहीं था, इसलिए अंधेरे में उसका मुंह अच्छी तरह देख नहीं सके थे तौ भी उन्होंने समझा—वह लड़की निहायत ही खुबसूरत है। उसकी उमर चौदह, पन्द्रह बरस से ज़्यादे की न होगी। बदन में मैले और फटे कपड़े पहिने हुए थी। खाने विना उसका चेहरा कुछ कुम्हलाया हुवा था। वह बड़ी मुश्किल से खड़ी होरही थी। यह देख उनका हृदय करुणा से भर गया,—उन्होने बटुए से मोमबत्ती निकाल, उसको जलाकर उसे अच्छी तरह देखना चाहा, मगर उस लड़की ने उनका भाव समझ, जल्दी से

उनका हाथ पकड़कर कहा—नहीं, नहीं, तुम ऐसा काम हर्गिज़ मत करो, नहीं तो कोई आदमी देख लेगें।।

जय—देखलेंगे तो क्या होगा? तुमने जिस समय खून हुवा था उसी समय पुलीस वाले को क्यों नहीं खबर कर दिया?

लड़की ने सिर हिलाकर कांपते हुए कहा—नहीं नहीं उनको ख़बर करदेने से मेरी नानी के ऊपर आफ़त आजाती साथही जिन्होने ऐसा भयानक काम किया है-वह मुझे और मेरी नानी को बहुत ही आदर से रखते थे, इसके अलावे इन दिनों साल भरके भीतर से तो एक तरह पर वही परवरिश भी करते ; उन्हींका हमलोगों को भी बड़ा भारी भरोसा था, इसलिए पुलीसवालों के कानतक यह ख़बर पहुंचजाती तो, उन्हे फांसी पर चढ़ाए बिना कभी भी नहीं छोड़ते। ऐसी हालत में हमदोनों अनाथा। फिर सहायता के लिए किसके दरवाजे पर खड़ी होने जाती?

जय—तुम्हे पुलीस वालों से इतना डर है तो, फिर मुझसे यहस बातें क्यों कहा? क्या तुमने मुझे पुलीसवालों में से नहीं समझा?

लड़की—नहीं नहीं, मैंने तुम्हारी चालों से, तुम्हारे रंग ढंग से वैसा नही समझा,-तिसपर भी मैं यह सब बातें तुम से नहीं कहा चाहती थी, मगर क्या करूं,-जिस समय से गई है, उस समय से नानी मेरे पास नहीं आई। मेरा भूखके मारे दम निकल रहा है, इसलिए अनायासही यह सब बातें मेरे मुंहसे निकल पड़ी। तुम भले आदमी हो, अतएव मेरी प्रार्थना है, वह सब बातें पुलीसवाले के कानों तक न पहुँचा देना? तेजी के साथ यह सब बातें कहने के बाद वह लड़की थककर चुप

होगई। उसने सहारे के लिए पासही की दीवार थाम ली। उसके मुंह से फिर कोई आवाज नहीं निकली।

जयदेव ऐयार थे, इसलिए उनके मनमें इस समय कुछ शक पैदा हुवा। उन्होने सोचा—सायद मेरे साथ कुछ ऐयारी खेली जाती हो। मुझे भुलावा देकर यह लड़की किसी का आसरा देख रही हो। अगर मैं थोड़ी देर और रह जाऊंगा तो—किसी से लड़ने भिड़ने की नौबत आजायगी। इससे बेहतरतो यह है कि इसको इसी हालत में छोड़ जाऊँ। लेकिन तत्कालही उस लड़की के सुन्दर बदन को देखकर उनके दिल से वह सन्देह का बोझा हट गया। वे फिर सोचने लगे—मुझे कौन जानता है जो मेरे साथ ऐसी चालाकी खेलेगा? यह वास्तव में दुःखीनी लड़की है। इसको इतनी सुन्दर होने पर भी समय ने सता रक्खा है। इसको समय, इस दशा में छोड़कर जाना, पापही नहीं महापाप भी है। मुझे संसार के लोग क्या कहेंगे। मुझसा पातकी और कौन होगा? यही सब सोचते सोचते उनकी आंखू में आसू भर आया। उन्होंने उसलड़की का सब हाल जानने की इच्छा से,-उसके पास आ, उसका हाथ थाम लिता। उस समय वह लड़की कमजोरी से कांप रही थी। उन्होंने उसे तसल्ली देते हुए कहा—तुम घबड़ावो मत, मैं तुम्हें इस आफ़त से निकालकर लेजाऊंगा,—मगर पहले मेरे साथ तुम्हे इस मकान के अन्दर उस मुरदे के पास चलना होगा।

लड़की—अरे बाप रे बाप, वह अब तक सड़कर भूत हो गया होगा, मैं ऐसेके पास नहीं जासकती। तुम्हे भी मैं कहती हूँ, तुम भी मत जावो?

जय—तुम डरो मत मैं तुम्हारे साथ हूँ। एक मर्तब उसको

अच्छी तरह चांजकर देखने के बाद मैं तुम्हे शहर के एक उम्दः धर्मशाले में ले जाऊँगा। अगर इस रास्ते से कोई एक्का आता हुवा मिल जायगा तो, तुम्हे पैदल भी नहीं चलना पड़ेगा।

लड़की—अच्छा तो. तुम मेरा हाथ थामकर लेचलो, मगर देखना मुझे छोड़कर न भाग जाना? जयदेव ने उसको सहारा देकर उसे दरवाजे के पास लाकर खड़ाकिया और ज़ोर से किवाड़ को ढकेला। वह फ़कत भिड़काया हुवा था, इस लिए ज़ोर पड़तेही तेजी के साथ खुलगया। दोनों उस के अन्दर एक अन्धेरी कोठरी में पहुँचे। जय देवने वहां पहुंचते ही कहा, कहो, अब तो रोशनी करदूँ? उस लड़की ने कांपती हुई आवाज में कहा—मुझे इस घर में उस दिन से उजाला देखतेही डर मालूम पड़ता है। खैर-इस समय तो तुम साथ, रोशनी करके देखलो। जयदेव ने मोमबत्ती निकालकर जलाई। उसके उजाले में उन्होंने उसका मुंह देखा। देखकर एक दम अवाक रह गए। उन्होंने आजतक ऐसी सुन्दर और विशाल आंखे कभी नहीं देखी थी। उसका दिललुभाने वाला सुघड़ चेहरा इस समय कुछ मुरझाया हुवा था, लेकिन बड़ी बड़ी अपने को सुन्दर लगाने वाली कमसीन औरतें भी उसके मुकाबले में नहीं आती थी। वे अवाक होकर कुछ क्षण तक उसके चेहरे को देखते रहे। उनको ऐसा करते देख, वह लड़की स्वभाव ही से शर्मा कर कुछ झुक गई। उन्होने इस समय मकान को भी अच्छी तरह से देखा। जो जो चीजें उनकी नज़रों के सामने आई, उसको देखकर उन्होने समझा-यह मकान एक दम खाला नहीं है, जैसा यह लड़की कहती है, वैसेही बहुत दिनों से यहां आदमी भी रहते हैं। उनके मनमें फिर सन्देह

हुवा, परन्तु उस सुन्दर वालिका की ओर देखते ही वह सन्देह दूर होगया। वह लड़की दीवार के सहारे सिरको झुकाए हुए खड़ी थी। उन्होंने उसकी ओर देखकर कहा—तुम्हे कष्ट तो बहुत होरहा है, मगर थोड़ी देर और कष्ट सहलो। बतावो, वह मुरदा किस कोठरी में है? लड़की ने ज़रासा सिर उठाकर हाथ से बताते हुए कहा—इसी की बग़ल वाली कोठरी में?

जय—अच्छा, तो तुम कुछ देर यहीं खड़ी रहो मैं उसको देख आता हूं।

लड़की—नहीं नहीं, मुझे अकेली यहां मत छोड़ो। डरके मारे मेरी जान चली जायगी।

जय—तो मेरे साथही तुम भी वहीं चली चलो।

लड़की—नहीं नहीं, मैं उस बिचारे को उस हालत में नहीं देख सकती।

जय—तो क्या यहां तक आकर भी उसे देखे बिना मुझे लौट जाना होगा?

लड़की—मैं कहती हूँ, तुम लौट चलो। यह मकान अब मुझे शैतान की तरह काटे खाता है। (कान लगाकर कुछ सुनने के बाद) इस मकान के आस पास इन दिनों बड़े-बड़े भयकर आदमी चीलकी तरह मँडराने रहते हैं।

जय—क्या तुम्हे किसी के आनेका शक होरहा है?

लड़की—औरतो किसी के आनेका शक नहीं, मगर नानी के आनेका शक होरहा है।

जय—तब तो तुम्हारे हकमें वहुतही अच्छा होगा। मैं भी तुम्हे उसे सुपुर्द कर निश्चिन्त हो जाऊँगा।

लड़की—नहीं नहीं, यह तुम ग़लती कर रहे हो। अगर

नानी ऐसे मौके पर हम दोनों को यहाँ देख पावेगी तो कच्चेही चबा जायगी।

जय—(हँसकर) क्या तुम्हारी नानी इतनी बेरहम और ज़बर्दश्त हैकि—वह हम लोगों को देखतेही चबा डालेगी। अगर वह आकर ऐसा करने पर उतारू हुई तो मैं समझ लूंगा, तुम घबड़ावो मत ?

लड़की— नहीं नहीं, तुम उसका मुकाबला हर्गिज़ नहीं कर सकते। वह बड़ोही खूंख़ार और ज़बर्दश्त है।

जय—तब फिर क्यों तुम ऐसो नानी के पास रहा करती हो।

लड़को—क्या करूं, मेरा दूसरा जगह ठिकाना कहाँ है ?

जय—तो चलो, मैं तुम्हारा ठिकाना लगा देता हूँ। वैसी बेरहम औरत के पास रहना तुम्हारी ऐसी कोमलाङ्गी वालिका को अच्छा नहीं है। क्या तुम्हे वह रोज़ सताया करती थी? इतने में उनकी नज़र दरवाज़े पर पड़ी। देखा दरवाज़ा बन्द है। उन्हे अच्छी तरह ख्याल था कि आती बेर दरवाज़ा खुला छोड़कर आए हुए थे। इस समय उसे बन्द देख उन्हे बड़ाही ताज्जुब हुवा और उन्होने लड़की की तरफ़ देखकर कहा—क्या तुमने दरवाज़ा बन्द कर दिया था ? लड़की ने डरते २ कहा—नहीं, मैंने तो दरवाज़ा नहीं बन्द किया था। यस किसने बन्द कर दिया ? ज़रा देखो तो खुलता है या नहीं ? जयदेवने दरवाज़े के पास आकर खोलना चाहा, मगर वह किसी तरह से भी खुला नहीं। मालूम पड़ता था—बाहर से किसी ने ज़ञ्जीर चढ़ा दी है। उनके दिल में फिर सन्देह ने जगह किया। वे लौटकर लड़की के पास आया ही चाहते थे,—इतने में किसी वज़नदार चीज़ के गिरने की भयंकर आवाज़

आई, साथही उनके हाथकी मोमबत्ती भी बुझ गई। लड़की एकाएक बड़े ज़ोरसे चिल्ला उठी। यह सुन अन्धेरे ही में जय देवने दौड़कर उसे संभालना चाहा, लेकिन किसी चीज़ की ठोकर खाकार वे वहीं गिरपड़े। चोट तो उन्हे कुछ नहीं आई मगर वे कुछ मिनट तक उठ न सके। इतने में वही लड़की सरकती हुई उनके घुटने के पास आकर बैठ गई, और उनके बदन पर हाथ फेरती हुई कहने लगी—कहीं चोट तो नहीं लगी। अफ़सोस ? तुमने मेरा कहा नहीं माना, उसीका नतीजा यह भोग रहे हो ? जयदेवने उठते-उठते कहा—यह किस चीज़के गिरने की आवाज़ थी ?

लड़की—मुझे क्या मालूम ? शायद किसी ओरकी दीवार गिर पड़ो होगी। तुम रोशनी करो तो मालूम पड़े।

जय—मेरे हाथ से मोमबत्ती छुटक कर कहीं दूर जा पड़ी। उसे खोज रहा हूँ, मगर मिलती नहीं। क्या यहां दीया नहीं है।

लड़की—है क्यों नहीं, लो जलावो? जयदेवने उसके हाथ से दीया लेकर जलाथा। उसकी रोशनी में उन्होने चारो तरफ़ देखा मगर कहीं कोई चीज़ गिरी हुई दिखलाई नहीं पड़ी। उन्होने लड़की की तरफ देखकर कहा-है तो यह मकान बड़ाही भयानक,—अब मेरा भी बिचार इस समय चलने का हो रहा है। मगर दरवाज़ा कैसे खुलेगा ? क्या बाहर होनेका दूसरा रास्ता नहीं है ? लड़की ने घबरायी हुई आवाज़ में कहा—शायद हो, मगर मैं नही कह सकती।

जय—जरूर, किसी ने बाहर आकर दरवाज़ा बन्द कर दिया है।

लड़की ने काँपते काँपते कहा—अफ़सोस, तुम्हारी भी

कहीं वैसी ही हालत न होजाय। नाहक तुम इस भूलभुलैये में आकर फँसे। यहां आने वाले आदमी को तो मैंने कभी जीता जागता वापस लौटते नहीं देखा है।

जयदेवका कलेजा अबकी बार उस लड़की की बातें सुन कांप गया। उन्होंने सोचा यह शहर तिलस्मी तरकीब से बना हुवा है, अतएव,—यह मकान भी उसी ढंगसे बना हुवा होगा। मैंने आकर यहां अच्छा नहीं किया: अब किधर से निकलें। कैसे निकलें? दरवाजे का खोलना तो मेरी ताकत के बाहर की बात है। उन्होंने फिर लड़की की तरफ देखते हुए कहा—क्या इस दरवाजे पर बाहर से साँकले भी चढ़ा सकते हैं?

लड़की—नहीं, उसको तो मैंने कभी देखा नहीं है?

जय—तो तुम लोग बाहर जाती बेर दरवाजे को खुलाही छोड़कर जाया करती थीं?

लड़की—इस तरह हम दोनों के दोनों को एक साथ निकलने का कभी मौका नहीं मिला था। जब कभी निकलती थीं तो दोनों में से एक यहाँ रहती थी।

जय—तब, अब बाहर निकलने का उपाय क्या है?

लड़की—मैं कैसे कहूं! शायद उस खिड़की से निकल सकें, मगर उस पर भी मजबूत मजबूत लोहेके छड़ लगे हुए हैं। उसकी बातें सुन जयदेव खिड़की के पास जाय ही चाहते थे, इतने में बड़े धड़ाके से दरवाजा खुला। यह देख, उस लड़की को याद भूलकर वे तेज़ी के साथ दरवाजे के बाहर हुवाही चाहते थे, इतने में उस लड़की ने टूटती हुई आवाज़ में कहा—हाय? तुम इस तरह मुझे भुलाए जा रहे हो। मैंने आज दो दिन से अन्नकी सूरत तक नहीं देखी हैं? क्या तुम्हारा दिल पत्थर का है?

जयदेव को इस समय वह लड़की याद आयी। वे लौट पड़े। उनका हृदय करुणा के श्रोत से भर गया। उन्होंने उसके पास आकर उसे तसल्ली देते हुए कहा—माफ करना दरवाजे के बन्द होने से मैं एक तरह पर घबड़ा गया था। मुझे उस समय तुम्हारी जरा भी याद न आई थी? सच मुच तुम बड़ी अभागिनी हो। तुम्हे इस समय बड़ाही कष्ट हो रहा होगा। मेरी ना समझी है। मैंने अपनी जानकी लालच में आकर तुम्हे भूल दिया। मुझे ऐसा करना उचित नहीं था। खैर अब उठो। इस तिपाई पर टिक कर बैठ जावो। मैं अभी तुम्हारे वास्ते खाना ले आता हूँ। पुलके उस पारही तो बहुत सी दुकाने हैं।

लड़कीने बहुत ही व्याकुल होकर कहा—नहीं नहीं, तुम मुझे छोड़कर मत जावो, मैं अकेली यहाँ नहीं रह सकती! जयदेव ने उसकी बातों पर कुछ भी ख्याल न कर, उसको गोदमें उठा, तिपाई पर बैठा दिया। लड़की कातर-द्रष्टि से उन्हे देखने लगी। जयदेव बाहर जाने लगे। लड़की ने घबड़ा कर दोनों हाथों से उनका कपड़ा पकड़ कहा—नहीं—नहीं, मेरी दशा पर जरा ख्याल करो। मैं अकेली यहां रह जाऊंगी तो मेरादम निकल जायगा। तुम घबड़ाए हुए हो शायद फिर लौटकर न आवो?

जय—नहीं नहीं, मैं क्यों लौट न आऊंगा। निस्सन्देह हो बैठी रहो। मैं अभी आता हूं। भला ऐसी दशा में तुम्हे छोड़कर भी कहीं जा सकता हूं। इतना कहकर वह बाहर जाने लगे; लड़की तिपाई परसे उठने लगी मगर कमजोरी की वजह से उठ न सकी। जयदेव दरवाजे के पास पहुँचे। इतने में वह लड़की करुणा स्वर से रो उठी। उसका रोना सुनकर जय-

देव लौट पड़े । पास आने पर आँखों में आँसू भर कर वह लड़की बोली—तुम कसम खाकर कहो कि—डरके मारे मै भाग न जाऊंगा । न किसी से भेंट होने पर भी मेरी याद न भुलाऊंगा ?

जय—हाँ हाँ, तुम सब तरह से बे फिकर रहो । मैं डरकर इस तरह तुम्हे छोड़ कहीं नही जा सकता, मर्द वादा करते हैं तो उसे निबाही के छोड़ते हैं । तुम उस तरफ से भी निश्चिन्त रहो,—मेरी भेट किसीसे भी नहीं होगी ।

लड़की—शायद नानी से भेट हो जाय और वह तुम्हे धमकावे ।

जय—अजी, वह मुझे क्यों धमकावेगी ? अगर धमकावेगी तो भी मैं चला आऊंगा । इसके जवाब में बालिका कुछ कहा ही चाहती थी, इतने में बगल की कोठरी से किसी के गोंगों कर कराहने की आवाज़ आई । जयदेव चौंक उठे । उन्होने जल्दी से दिया उठाया और उस कोठरी में आकर इधर उधर देखने लगे । उन्हे वहाँ कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ा । लाचार वे लौटकर उसी कोठरी मे आए, मगर वहां आकर उस लड़की को न देख उनके ताज्जुबका ठिकाना नहीं रहा । उन्होने इधर-उधर खोजा,-लेकिन कहीं भी वह न मिली । सोचने लगे—वह लड़की उठकर बाहर तो नहीं चली गई ? मगर उसकी वैसी हालत तो थी नही ? तब फिर क्या हुई,--क्या जमीन मे समा गई ? जरा चलकर बाहर तो देखें ? इतना सोचकर वे दरवाजे के बाहर जाया ही चाहते थे, इतने में बड़े धड़ाके के साथ दरवाजा बन्द हुवा । उन्होने जोर से उस पर लाता मारा, मगर वह आवाज भर देकर रह गया । अब उन्हे अपने फंसने में कोई भी सन्देह नही रहा । उनका तमाम

बदन पसीने में लथ पथ हुवा। वे लाचार होकर खिड़की के पास आए। उनकी नज़र उस पर पड़ते ही उन्होने देखा शेरकी तरह दो चमकती हुई आँखें उन्होकी तरफ़ घूर रही है। उनको हिम्मत कुछ सुस्त होगई, वे वहां से आगे बढ़ नहीं सके। उनके दोनों पांव बीस बीस मनके लाहे से जकड़े हुए मालूम पड़ने लगे। आंखों की तेजी से तलमलाकर उन्होंने अपनी नज़र बन्द कर ली। कुछ देरके बाद उन्होंने आँखें खोलकर देखा, वे चिकचिकाती हुई आँखें उन्हे उसी तरह घूर रही थी। वे अपने को संभाल न सके। पागलकी तरह उछलकर उन्होंने अपने बटुए में से तमञ्चा निकाल उसकी तरफ फैर कर दिया। घबड़ाए हुए थे, इसलिए निशाना तो ठीक जगह पर नहीं लगा, मगर वे दोनों ख़ौफ़नाक आंखें उसी दम गायब होगईं। वे साहस कर जङ्गले को उखाड़ने के लिए बढ़ाही चाहते थे, इतने में किसी ने पीछे से उनका कपड़ा पकड़कर खींचा। उन्होने चौंक, बिजली की तरह घूम कर पीछे देखा। वही लड़की खड़ी है। उन्होंने घबड़ाकर कहा-तुम कहा गई थी।

लड़की ने बहुत ही धीरे धीरे कहा—तुम्हारे उस तरफ जातेही नानी आगई थी, उसी ने मुझे इस आलमारी के अन्दर छिपा दिया था। इस समय बडी मुश्किल से तो निकल आई हूं। तुमने तमञ्चेका फैर करके अच्छा नहीं किया। अब न जाने वह तुम्हे क्या कर डालेगी?

जय—क्या उसकी आंखे शेरकी तरह चमकती है?

लड़का—आंखे ही क्यों, एकाएक उसकी सूरत देखोगे तो बेहोश हो जावोगे।

जय—हां; इस समय तो तुम्हारी बातें सच्ची मालूम होती है, मगर अब यहां से निकल कैसे सकेंगे?

लड़की—बिना उसको सर किए तुम यहाँ से निकल नहीं सकते। मैंने तो तुम्हे पहलेही कह दिया था, तुमने नहीं माना, अब क्या हो सकता है?

जय—अच्छा, अब जैसी ईश्वर की मर्जी होगी, वैसाही होगा। मगर यह तो बतावो, यहां पर कुछ खानेका सामान है, अगर हो तो बतावो, मैं तुम्हे खिलाऊंगा।

लड़की—नहीं, अब मुझसे खाया नहीं जायगा। उसकी सुरत देखतेही मेरी भूख हवा होगयी।

जय—अफ़सोस? आजकी घटनाने तो मुझे भी पागल बना डाला, ख़ैर यह तो बतावो, तुम्हारा क्या नाम है?

लड़की—मुझे तो पहले सब कोई राधा कहते थे, मगर इधर साल डेढ़ साल से नानी केसरी कहा करती है। इसके जवाब में जयदेव कुछ कहाही चाहते थे, इतने में लड़की ने उनका कपड़ा खींचकर चुप रहने का इशारा किया। उन्होने देखा उसका चेहरा डरके मारे बिगड़ रहा है। तमाम बदन बेतकी तरह काँपता जाता है उन्होने चौंक कर दरवाज़े की तरफ़ देखा—दोनों पल्ले खुले हुए हैं और सामने ही एक चुडेल की तरह विकट सूरत वाली बुढ़िया खड़ी, बिकराल आँखों से उन दोनों की ओर घूर रही है। इस समय उसकी चमकती हुई आंखें गुस्से से लाल अंगारे की तरह हो रही थी। उन्होंने समझ लिया यही केसरी की नानी होगी। वे छातीको ऊंची करके उसके सामने खड़े हुए। उस राक्षसी ने उनकी जरा भी परवाह न करके केसरी की तरफ देखकर पूछा—केसरो? यह मौतका निवाला कौन है?

केसरी ने डरके मारे लड़खड़ाई हुई आवाज़ में कहा-माफ़ करो नानी? मुझे इसके अन्दर आते डर मालूम होता था इसलिए इन भले आदमी को मैंने साथलिया। ये मुझे यहां पहुँचाने आए थे।

वह—बस बस, अब मैं तेरी एक भी बात सुना नहीं चाहती। तू छिनाल है। तू वेश्या है हरामजादी है तू मुँह झौंसी है। जा निकल मेरे घर से।

जय—तुम उसके ऊपर नाहक़ क्यों बिगड़ती हो। उसका कुछ भी कसूर नहीं है। बिचारी डरके मारे यहां नहीं आसकती थी इस लिए मैं पहुंचाने आया था। ऐसी सुशील लड़की को तुम्हे छिनाल कहते शरम नहीं आती उस चुडैलने उनकी बात पर कुछ भी कान न दे, केसरी को उसी दम बाहर निकल जाने का इशारा किया। उसका बदन शिर से एँडी तक काँप उठा। वह धीरे धरे घीर से निकल कर बाहर हो गयी। जयदेव नहीं चाहते थे कि वह इस तरह से बाहर निकल जाय, इस लिए वे उसको रोकने के लिए बढ़ा ही चाहते थे, इतने में रोशनी बुझ गयी। वह कोठरी घोर अन्धकार में डूबी। उन्हे हाथों हाथ सूझाई नहीं देने लगा। वे ढंगको अच्छा न समझ कूदकर बाहर जाया ही चाहते थे, इतने में पीछे से आकर किसी ने ज़ोर से उनका गला धर दबाया। उसने समझा-किसी लोहेके पञ्जेने उनका गला दबाया है छूटने के लिए उन्होने बड़ी कोशिश-की, लेकिन किसी तरह से भी छूट न सके। वे सोचने लगे—ऐसा मौक़ा तो मुझे कभी नहीं पड़ा था। क्या यह वही बुढ़िया है? वह तो इतनी मज़बूत नहीं मालूम पड़ती थी। उसके हाथ में इतनी ताक़त कहां से आई? यह कोई दूसरा ही जबर्दस्त तो नहीं है? उनका दम घुटने लगा। आंखें उलटने लगी। वे बार बार छपटा कर गोंगों

करने लगे। इतने में उसी हाथ ने जोर से पकड़ कर उन्हें एक कोठरी में फेंक दिया, और बाहर से भारी सांकल चढ़ने की आवाज़ आई। जयदेव कुछ देर के बाद गला सुहराते हुए, संभलकर उठ बैठे। अन्धकार के मारे कुछ दिखलाही नहीं पड़ता था। उन्होने बटुए से सलाई निकाली। उसमें अब तीन चार सलाई रह गई थी। मोमबत्ती न होनेका उन्हे अफसोस हुवा, तब भी उन्होने एक सलाई जलाकर देखा,-कोठरी बिल्कुल धूल से भरी हुई थी। दीवार संगीन पत्थर की बनी हुई थी और उसमें कहीं मोखा, खिड़की नही थी। दियासलाई बुझ गयी। वे दरवाजे के पास आकर उसे खोलनेकी कोशिश करने लगे, मगर थक गए, किसी तरह से खुला नहीं। इतने में पैर के नीचे कुछ सरकता हुवा मालूम पड़ा। उन्होने दूसरी दिया सलाई जलाकर देखा। ज़मीन हिलती हुई मालूम पड़ी। वे जीमें डर गए। कुछ देर के बाद संभल कर उन्होने धीरे से फ़र्शपर लात मारा। वह भीतर से पोला मालूम पड़ा। फिर दिया सलाई बुझ गयी। अब वह ज़मीन तेजी के साथ सरकती हुई मालूम पड़ी। उन्होने दूसरी दियासलाई जलाकर देखा। जमीन आधे से ज्यादे सरक कर दीवार के अन्दर घुस रही थी। उनकी नजर सरकी हुई जगह पर गई-देखा,-लबालब पानी भरा हुवाहै। उन्होने फूर्त्तिके साथ कमन्दको दीवार पर फेंका, मगर वह चिकने पत्थर पर वह कहीं भी नहीं अटकी। एकबार दोबार कई बार फेंका, लेकिन सब व्यर्थ। अन्तमें वह फर्श सरक कर दीवार के अन्दर चली गई और वे धम्म से पानी में गिर पड़े।

पाँचवाँ भाग समाप्त।

इसके आगे का हाल जानना हो तो छठवाँ भाग देखिए।

कमलकुमारी

नामक ऐयारी और तिलिस्मी विषय के उपन्यास के एक चित्र का नमूना । मूल्य २)